ई-पत्रिका

₹ 49/-

▶ **ग्रोक देवे गारी**
स्वदेशी चैटबॉट ही है जवाब

▶ **नीतीश की विरासत**
उत्तराधिकार या विघटन ?

CULT CURRENT

वर्ष: 8 अंक: 4 अप्रैल, 2025

WE MAKE VIEWS

सिर्फ एक ट्रेन नहीं

77 वर्षों से बंधक है बलूचिस्तान!

Let's 360°

- Media Consultancy
- Web solution
- Advertising
- Publication
- Languages Services
- Survey & Research
- Branding
- AV Production
- Campaign management
- Event organizer
- PR partner, PR associate
- Content writer & provider
- Media analyst

URJAS MEDIA VENTUE IS PERHAPS THE ONLY CONSULTING FIRM THAT CAN GIVE YOUR ORGANISATION A 360 DEGREE MEDIA BUSINESS GROWTH CONSULTING THROUGH IT'S 360 CAPABILITIES. FOR US, CONSULTING DOES NOT ONLY MEAN MECHANICAL COST REDUCTION THROUGH BETTER IT APPLICATIONS, WE FIND OUT WHAT YOUR ORGANISATION REALY NEEDS AND GIVE YOU AN INTELLECTUAL SOLUTION THAT HELP YOU REDUCE COST AS WELL AS HELPS YOURS BUSINESS GROW AND BEAT THE COMPETITION.

NOW!! OUR CONSULTANT WILL GET BACK TO YOU IN 24 HOURS AND PUT YOU IN TO THE HIGH GROWTH PATH

URJAS MEDIA
VENTURE

BEAT THE COMPETITION

www.urjasmedia.com

SMS 'BUSINESS GROWTH'
TO +91-8826-24-5305 OR
E-MAIL info@urjasmedia.com

गुमनाम नायिक
सीता देवी की प्रेरणादायक यात्रा

सीता देवी

बुरा समय तकलीफें तो लाता है, लेकिन साथ ही कई अहम सीख भी देता है जो हमारे भविष्य को बदल सकती है। गया, बिहार की रहने वाली सीता देवी इसका जीता-जागता उदाहरण हैं। कभी एक साधारण गृहिणी के रूप में बच्चों की देखभाल करने वाली सीता देवी, आज अपने शहर में एक प्रसिद्ध महिला इलेक्ट्रीशियन के रूप में जानी जाती हैं। करीब 15 साल पहले, उन्होंने मजबूरी में बिजली के उपकरणों की मरम्मत का काम शुरू किया था, लेकिन अब यह उनका जुनून और पहचान बन चुका है। गया के काशीनाथ मोड़ पर अपनी दुकान में वह बल्ब से लेकर एसी और माइक्रोवेव तक ठीक करती हैं। बात करते हुए सीता देवी ने कहा, 'मेरे पास जो भी मशीन आती है, मैं उसे ठीक कर लेती हूँ, और इसी कारण मेरे पास काम की कभी कमी नहीं होती।'

संपादकीय

राष्ट्रीय संपादक
संजय श्रीवास्तव

संपादक
श्रीराजेश

प्रबंध संपादक
सच्चिदानंद पाण्डेय

रोमिंग संपादक
डॉ. राजाराम त्रिपाठी

राजनीतिक संपादक
अंशुमान त्रिपाठी

मेट्रो संपादक
शक्ति प्रकाश श्रीवास्तव
डॉ. रुद्र नारायण

अंतर्राष्ट्रीय संपादक
श्रीश पाठक

कारपोरेट संपादक
गगन बत्रा

खेल संपादक
जलज श्रीवास्तव

डिजीटल संपादक
सुनीता त्रिपाठी

सहायक संपादक
संदीप कुमार

उप संपादक
मनोज कुमार
संतु दास

कला संपादक
जया वर्मा

वेब एवं आईटी विशेषज्ञ
अनुज कुमार सिंह

फोटो संपादक
विवेक पाण्डेय

विशेष संवाददाता
कमलेश झा
विकास गुप्ता

संवाददाता
संदीप सिंह
अनिरुद्ध यादव

ब्यूरो प्रमुख (अंतर्राष्ट्रीय)
अकुल बत्रा (अमेरिका)
सी.शिवरतन (नीदरलैंड)
जी. वर्मा(लंदन)
डॉ. मो. फहीम अकबर (पाकिस्तान)
ए. असगरजादेह (ईरान)
डॉ. निक सेरी (मलेशिया)

ब्यूरो प्रमुख (राष्ट्रीय)
आर. रंजन (नई दिल्ली)
संजय कुमार सिंह (लखनऊ)
कैप्टन सुधीर सिन्हा (रांची)
निमेष शुक्ल (पटना)
नागेन्द्र सिंह (कोलकाता)
राकेश रंजन (गुवाहाटी)

विपणन
सत्यजीत चौधरी
महाप्रबंधक

ऑनलाइन प्रसार
सृजीत डे

CULT CURRENT
WE MAKE VIEWS
DELENG19447

वर्षः 8 अंकः4 अप्रैल, 2025

Editorial/Business office

Follow us:
fb.com/cultcurrent @Cult_Current cultcurrent@gmail.com

URJAS MEDIA VENTURE
Head office: Swastik Apartment, GF, Pirtala, Agarpara, Kolkata 700 109, INDIA, Tel: +91 6289-26-2363
Corporate Office: 14601, Belaire Blvd, Houston, Texas 77083 USA Tel: +1 (832) 670-9074
Web: http://cultcurrent.in

Cult Current is a monthly e-magazine published by Urjas Media Ventures from Swastik Apartment, GF, Pirtala, Agarpara, Kolkata 700 109.
Editor: Srirajesh

Disclaimer: All editorial and non-editorial positions in the e-magazine are honorary. The publisher and editorial board are not obligated to agree with all the views expressed in the articles featured in this e-magazine. Cult Current upholds a commitment to supporting all religions, human rights, nationalist ideology, democracy, and moral values.

CONTENT

COVER STORY 30

12 **ग्रोक देवे गारी** | **स्वदेशी चैटबॉट** ही है जवाब

16

तुर्की में लोकतंत्र एर्दोआन के खिलाफ भड़का **जनाक्रोश**

20

विकास की राह में **छूटे गांव**

62

भू-राजनीति का नया मोड़

क्या टूट रहा है ट्रांस-अटलांटिक गठबंधन?

परिसीमन: क्या बदलेगा भारत का संघीय भविष्य 52

रक्षा शक्ति का उदय: भारत- का बढ़ रहा निजी रक्षा उत्पादन की ओर झुकाव 54

नीतीश की विरासत: उत्तराधिकार या विघटन?58

तिब्बत पर प्रभुत्व, स्थापित करने की चीन की रणनीति 66

क्या बन रहा है एक और नया एशियाई गुट 68

ऑनलाइन गैंग: सहज शिकार हो रहे किशोर 74

श्रुति का मौन बयान

ऑडिशन स्कैंडल ने सोशल मीडिया पर मचाया कोहराम! **76**

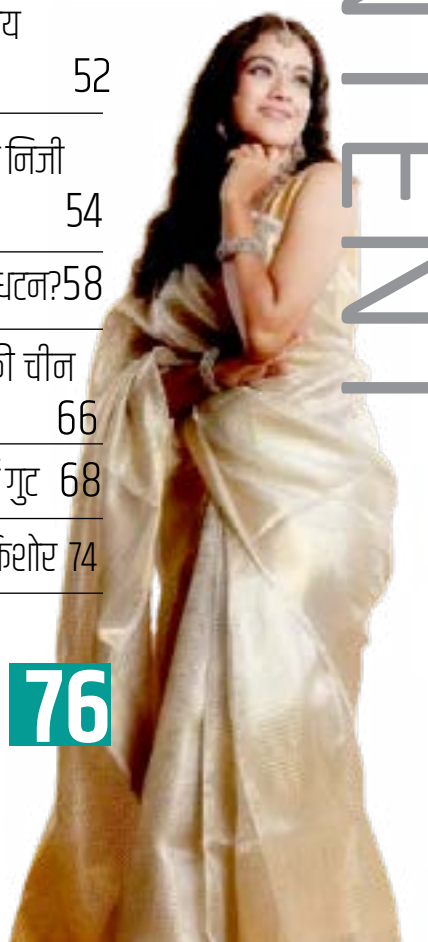

Small talk

सना खान में आया आध्यात्मिक परिवर्तन

पूर्व अभिनेत्री सना खान, जिन्होंने एक बार बॉलीवुड को ₹शैतान का घर₹ कहा था, फिर से सुर्खियों में हैं। 2020 में अचानक अभिनय छोड़ने और इस्लामी विद्वान मुफ्ती अनस सैयद से विवाह करने के बाद, सना अब इस्लाम के प्रचार में समर्पित हो गई हैं। ग्लैमरस करियर को छोड़ने के बावजूद, सना मुंबई में शानदार जीवन जी रही हैं, अपना खुद का ब्रांड और पॉडकास्ट चला रही हैं। उनके पति, जो गुजरात के एक डायमंड व्यापारी हैं, सना की इस आध्यात्मिक यात्रा के दौरान उन्हें एक आरामदायक जीवन प्रदान कर रहे हैं। ●

2025 में तहलका मचाने वाली खोजें

सूर्य-संवर्धित सफलता: नासा का पार्कर सोलर प्रोब सम्मानित!

नासा के पार्कर सोलर प्रोब मिशन ने एक और बड़ी उपलब्धि हासिल की है। नासा के इंजीनियरों और वैज्ञानिकों की टीम, जिसमें मैरीलैंड के लॉरेल स्थित जॉन्स हॉपकिन्स एप्लाइड फिजिक्स लेबोरेटरी और अमेरिका के 40 से अधिक सहयोगी संगठनों के विशेषज्ञ शामिल हैं, को प्रतिष्ठित 2024 रॉबर्ट जे. कॉलियर ट्रॉफी से सम्मानित किया गया है। यह सम्मान नेशनल एरोनॉटिक एसोसिएशन द्वारा हर वर्ष दिया जाता है और इसे एयरोस्पेस क्षेत्र में सबसे उत्कृष्ट उपलब्धियों के लिए माना जाता है। ●

अब टिकाऊ उर्वरक से होगी उत्सर्जन में कटौती!

बार्सिलोना के शोधकर्ताओं ने एक अनोखा और पर्यावरण के अनुकूल समाधान खोज निकाला है—मानव मूत्र को उर्वरक के रूप में पुनर्चक्रित करना। इस पद्धति से कार्बन उत्सर्जन और जल उपयोग में भारी कमी आई है, जिससे शहरी खेती को अधिक टिकाऊ बनाने में मदद मिली है। शोधकर्ताओं ने "पीली जल" (मूत्र) से नाइट्रोजन की पुनः प्राप्ति को पर्यावरण के लिए बेहद लाभकारी पाया है। ●

ड्रोन अब सुन सकते हैं पानी के नीचे के संदेश

शोधकर्ताओं की एक टीम ने ऐसा उपकरण तैयार किया है जो पानी के नीचे से आने वाले ध्वनिक संदेशों (सोनार) को सुनने के लिए रडार तकनीक का उपयोग करता है। यह उपकरण पानी की सतह पर उत्पन्न होने वाले सूक्ष्म कंपन को डिकोड करके उन संदेशों को पकड़ लेता है। सिद्धांत रूप में, इस तकनीक का उपयोग पानी के नीचे स्थित ट्रांसमीटर की स्थिति का मोटे तौर पर पता लगाने के लिए भी किया जा सकता है। ●

डीएनए माइक्रोस्कोपी: 3डी नक्शों का अनावरण!

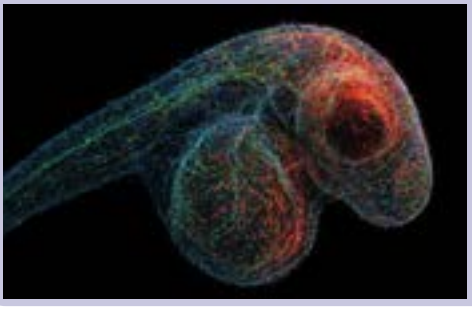

पारंपरिक जेनेटिक सीक्वेंसिंग से किसी नमूने, जैसे कि एक ऊतक का टुकड़ा या रक्त की बूंद में मौजूद आनुवंशिक सामग्री के बारे में बहुत कुछ पता लगाया जा सकता है। लेकिन यह यह नहीं बताती कि उस नमूने के भीतर विशेष आनुवंशिक अनुक्रम कहां स्थित हैं या वे आस-पास के जीन और अणुओं से कैसे संबंधित हैं। ●

Volkswagen की टिगुआन R-Line: 14 अप्रैल को होगी लॉन्च!

14 अप्रैल की लॉन्चिंग से पहले, वॉल्वो ने अपनी नई टिगुआन R-Line की फीचर्स का खुलासा कर दिया है! इस SUV में आपको स्पोर्टी 'R' थीम के साथ अंदर और बाहर दोनों ओर एक आकर्षक डिजाइन देखने को मिलेगा। प्रमुख विशेषताओं में मसाजिंग सीटें, 3-ज़ोन क्लाइमेट कंट्रोल, पार्क असिस्ट, वायरलेस चार्जिंग, 30 रंगों की एंबियंट लाइटिंग, और स्टाइलिश 19-इंच के अलॉय व्हील्स शामिल हैं। ●

नियुक्ति

जस्टिस जॉयमाल्या बागची
न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय

10 मार्च, 2025 को कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश जस्टिस जॉयमाल्या बागची को भारत के सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किया गया। इस नियुक्ति के साथ, उनके भविष्य में भारत के मुख्य न्यायाधीश बनने की संभावना प्रबल हो गई है।

इस्तीफा

नितिन पटेल
पूर्व प्रमुख, स्पोर्ट्स साइंस विंग, बीसीसीआई

बीसीसीआई के स्पोर्ट्स साइंस विंग के प्रमुख नितिन पटेल ने अपने पद से 15 मार्च को इस्तीफा दे दिया है। नितिन ने अपने तीन साल के कार्यकाल के दौरान मोहम्मद शमी, श्रेयस अय्यर, केएल राहुल, ऋषभ पंत जैसे कई घरेलू और अंतरराष्ट्रीय क्रिकेटर्स के रिहैब में अहम भूमिका निभाई है।

उन्होंने कहा

क्यूरियाकोस मित्सोटाकिस
प्रधान मंत्री, ग्रीस

"ग्रीस, भारत के लिए यूरोप और उससे आगे के लिए एक प्राकृतिक प्रवेश द्वार है। ग्रीस इस नए आईएमईसी कॉरिडोर के बिल्कुल केंद्र में स्थित है।"

क्रिस्टोफर लक्सन
प्रधान मंत्री, न्यूजीलैंड

"भारत को हिंद-प्रशांत क्षेत्र में अपनी निर्णायक भूमिका निभानी होगी, क्योंकि न्यूजीलैंड इस क्षेत्र में अपने रणनीतिक हितों के लिए भारत जैसे भागीदारों की ओर देख रहा है।"

श्रद्धांजलि

डॉ. भीम राव अंबेडकर
(14/04/1891-06/12/1956)

डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर, जिन्हें अक्सर भारतीय संविधान के जनक के रूप में सराहा जाता है, एक अद्वितीय समाज सुधारक, न्यायविद्, अर्थशास्त्री और राजनीतिज्ञ थे, जिनकी समानता और न्याय की अथक खोज ने आधुनिक भारत को अपरिवर्तनीय रूप से आकार दिया। 1891 में हाशिए पर धकेली गई महार जाति में जन्मे, अंबेडकर ने जातिगत भेदभाव की क्रूर वास्तविकताओं का प्रत्यक्ष अनुभव किया, जिसने सामाजिक अन्याय के खिलाफ उनके आजीवन संघर्ष को बढ़ावा दिया। एक प्रतिभाशाली विद्वान, उन्होंने कोलंबिया विश्वविद्यालय और लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स से डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की, जिससे वे अपने समय के सबसे उच्च शिक्षित भारतीयों में से एक बन गए।

अंबेडकर ने अपना जीवन दलितों (जिन्हें पहले 'अछूत' के रूप में जाना जाता था) के अधिकारों की वकालत करने, गहरी जड़ें जमा चुकी जाति व्यवस्था को चुनौती देने और शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व तक उनकी पहुंच की वकालत करने के लिए समर्पित कर दिया। उनका मानना था कि सच्ची समानता केवल कानूनी और संवैधानिक सुधारों के माध्यम से ही प्राप्त की जा सकती है। इस दृढ़ विश्वास ने उन्हें भारत के संविधान के मसौदे में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए प्रेरित किया, जहाँ उन्होंने जाति, पंथ या लिंग की परवाह किए बिना सभी नागरिकों के लिए सामाजिक न्याय, समानता और मौलिक अधिकारों के सिद्धांतों को स्थापित किया।

अपने संवैधानिक योगदानों के अलावा, अंबेडकर एक दूरदर्शी नेता थे जिन्होंने दलितों को सशक्त बनाने के उद्देश्य से कई संस्थानों और संगठनों की स्थापना की। उन्होंने शिक्षा को सामाजिक गतिशीलता के उपकरण के रूप में बढ़ावा दिया और उन्हें अपने अधिकारों और गरिमा पर जोर देने के लिए प्रोत्साहित किया। 1956 में बौद्ध धर्म में उनका धर्मांतरण, उनके हजारों अनुयायियों के साथ, हिंदू धर्म के भीतर भेदभावपूर्ण प्रथाओं के खिलाफ एक शक्तिशाली बयान था। डॉ. अंबेडकर की विरासत उत्पीड़न और असमानता के खिलाफ अपनी लड़ाई में लाखों लोगों को प्रेरित करती है, जिससे भारत के सबसे प्रभावशाली और परिवर्तनकारी हस्तियों में उनका स्थान मजबूत होता है। ●

वेंस का ग्रीनलैंड प्रस्ताव: सुरक्षा या अधिग्रहण?

ग्रीनलैंड की यात्रा के दौरान, अमेरिकी उपराष्ट्रपति जेडी वेंस ने एक कठोर संदेश दिया। पिछली विलय की आकांक्षाओं को नरम करते हुए, वेंस ने चीन के विस्तारवाद और बदलते आर्कटिक जलवायु से उत्पन्न खतरों पर जोर दिया। उन्होंने सुझाव दिया कि ग्रीनलैंड की पारंपरिक सुरक्षा भागीदारी पुरानी हो चुकी है। वेंस ने एक ऐसा दृष्टिकोण प्रस्तुत किया जिसमें ग्रीनलैंड अपने कथित 'कमजोर और कंजूस डेनिश अधिपति' को त्याग देता है और अमेरिका के 'मजबूत और सुरक्षात्मक आलिंगन' को अपनाता है। उन्होंने तर्क दिया कि केवल अमेरिका के साथ गठबंधन करके ही ग्रीनलैंड वैश्विक बदलावों के बीच अपनी सुरक्षा, मूल्यों और खनिज संपदा की रक्षा कर सकता है। जेडी वेंस ने विशेष रूप से चीन द्वारा ग्रीनलैंड में हवाई अड्डों के निर्माण के प्रयासों का उल्लेख किया, जिसे उन्होंने एक गंभीर सुरक्षा चिंता के रूप में प्रस्तुत किया। ●

एआई उपकरण निशाने पर: राजनीति एवं चैटबॉट टकराए

ग्रोक, चैटजीपीटी और डीपसीक जैसे एआई उपकरण अपनी बढ़ती बुद्धिमत्ता के साथ तेजी से विवादास्पद होते जा रहे हैं। मनोरंजक होने के साथ-साथ ये प्लेटफ़ॉर्म राजनीतिक युद्ध के मैदान में भी बदल रहे हैं। इन प्रणालियों के भीतर डेटा सुरक्षा, लोकतांत्रिक सिद्धांतों, तटस्थता और पूर्वाग्रहों को लेकर चिंताएँ बढ़ रही हैं। शिव नादर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर आकाश सिन्हा और सुप्रीम कोर्ट की वकील खुशबू जैन के साथ इन मुद्दों पर चर्चा की गई। वार्तालाप एआई के निहितार्थ और भारत की महत्वपूर्ण भूमिका पर केंद्रित थे। ●

भारत-कनाडा संबंध तनावपूर्ण: और कलह

कनाडा के आगामी चुनावों से पहले भारतीय-कनाडाई सांसद चंद्र आर्य सुर्खियों में हैं। रिपोर्टों से पता चलता है कि लिबरल पार्टी के सदस्य और तीन बार के सांसद आर्य को भारत के साथ कथित करीबी संबंधों के कारण चुनाव लड़ने से रोक दिया गया है। सूत्रों का दावा है कि विदेशी हस्तक्षेप की आशंकाओं के कारण यह निर्णय लिया गया। कहा जा रहा है कि चंद्र आर्य ने पिछले अगस्त में कनाडाई सरकार को सूचित किए बिना प्रधानमंत्री मोदी से मुलाकात की थी। ●

यूनुस की चीन यात्रा: भारत के लिए निहितार्थ

चीन की यात्रा के दौरान, बांग्लादेश के अंतरिम सरकार के सलाहकार मोहम्मद यूनुस ने चीनी कंपनियों को तीस्ता नदी परियोजना में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया। चीन के बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव को आगे बढ़ाने के लिए भी समझौते किए गए। चीनी विदेश मंत्रालय की प्रवक्ता माओ निंग ने यूनुस और राष्ट्रपति शी जिनपिंग के बीच हुई बैठक पर प्रकाश डाला, जिसमें बांग्लादेश के साथ चीन की मैत्रीपूर्ण और भरोसेमंद साझेदारी के प्रति प्रतिबद्धता को दोहराया गया। ●

म्यांमार भूकंप: मृतकों की संख्या 10,000 से अधिक हो सकती है

म्यांमार में आए भूकंप से मरने वालों की संख्या 1,644 तक पहुंच गई है, जबकि 3,400 लोग घायल हुए हैं। म्यांमार के सैन्य जुंटा ने इसे एक सदी की सबसे भीषण आपदा बताया है। अमेरिकी भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण का अनुमान है कि मृतकों की संख्या 10,000 तक पहुंच सकती है, जिससे म्यांमार के सकल घरेलू उत्पाद से अधिक आर्थिक नुकसान होगा। ●

इजरायल-हमास संघर्ष विराम की उम्मीदें फिर से जगीं

हमास ने मध्यस्थों द्वारा तैयार किए गए एक नए संघर्ष विराम प्रस्ताव के लिए समर्थन का संकेत दिया है, जिसमें 50 दिनों के युद्धविराम के बदले में पांच और बंधकों को रिहा करने की पेशकश की गई है। हमास के वरिष्ठ नेता खलील अल-हय्या ने मिस्र और कतर की मध्यस्थता वाले मसौदा समझौते के लिए अपनी मंजूरी की पुष्टि की। इजरायल के प्रधानमंत्री नेतन्याहू के कार्यालय ने योजना प्राप्त होने और अमेरिका द्वारा समन्वित एक जवाबी प्रस्ताव प्रस्तुत करने की बात स्वीकार की है। ●

हिंसक विरोध प्रदर्शनों से लड़खड़ाया नेपाल का राजशाही आंदोलन

नेपाल में राजशाही समर्थक आंदोलन एक हिंसक ₹जन आंदोलन₹ के बाद अनिश्चित भविष्य का सामना कर रहा है, जिसमें दो लोगों की मौत हो गई। नेता दुर्गा प्रसाई के पुलिस द्वारा वांछित होने और आयोजक नवराज सुबेदी के घर में नजरबंद होने के साथ, आंदोलन में स्पष्ट नेतृत्व का अभाव है। राजशाही समर्थक राष्ट्रीय प्रजातंत्र पार्टी (आरपीपी) के वरिष्ठ नेताओं की गिरफ्तारी ने मामलों को और जटिल बना दिया है। आंदोलन का उद्देश्य राजशाही को बहाल करना और पूर्व राजा ज्ञानेंद्र शाह को नारायणहिति महल में वापस लाना है। लगातार विरोध प्रदर्शनों के वादों के बावजूद, नेताओं को इस बारे में कोई स्पष्टता नहीं है कि भविष्य की कार्रवाइयों का नेतृत्व कौन करेगा। विश्लेषकों का सुझाव है कि राजशाही समर्थक समूहों के बीच आम सहमति की कमी के कारण एक एकल नेता का उदय बाधित हो रहा है। ●

अमेरिका ने पाकिस्तानी कंपनियों पर निर्यात प्रतिबंध लगाए

अमेरिकी वाणिज्य विभाग ने पाकिस्तान की 19 कंपनियों सहित आठ देशों की 70 कंपनियों को निर्यात प्रतिबंध सूची में डाल दिया है। प्रभावित अन्य देशों में चीन (42), संयुक्त अरब अमीरात (4), ईरान, फ्रांस, दक्षिण अफ्रीका, सेनेगल और यूके शामिल हैं। इन संस्थाओं को ₹एंटीटी लिस्ट₹ में जोड़ा गया है, जिसमें उन संगठनों को शामिल किया गया है जिन्हें अमेरिकी राष्ट्रीय सुरक्षा, विदेश नीति या हितों के खिलाफ काम करने वाला माना जाता है। ●

क्या एर्दोगान तुर्की को रूस-शैली की तानाशाही की ओर ले जा रहे हैं?

तुर्की के राष्ट्रपति एर्दोगान के राजनीतिक प्रतिद्वंद्वी, एकरेम इमामोग्लू की गिरफ्तारी व्यापक आलोचना उत्पन्न कर रही है। मिडिल ईस्ट इंस्टीट्यूट के तुर्की कार्यक्रम की निदेशक गोनुल टोल इसे एक महत्वपूर्ण मोड़ के रूप में देखती हैं, जो 22 वर्षों के बाद सत्ता में बने रहने की एर्दोगान की इच्छा से प्रेरित है। टोल का मानना है कि एर्दोगान तुर्की को एक रूसी-शैली के सत्तावादी राज्य में बदलना चाहते हैं, चुनावों में हेरफेर करके और अपने दुश्मनों को चुनकर। इमामोग्लू, एक संभावित राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार के रूप में, एर्दोगान के लिए खतरा हैं। टोल का सुझाव है कि विपक्षी सीएचपी को दमन के जोखिम के बावजूद इमामोग्लू की गिरफ्तारी का विरोध जारी रखना चाहिए। ●

राहुल गांधी की नागरिकता को चुनौती देने वाली याचिका

कांग्रेस सांसद राहुल गांधी की नागरिकता से संबंधित एक याचिका पर सोमवार, 24 मार्च को इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लखनऊ बेंच में सुनवाई हुई। अदालत ने केंद्र सरकार को इस मामले में अपनी प्रतिक्रिया पेश करने के लिए अतिरिक्त समय दिया है। समाचार संगठनों की रिपोर्ट है कि अदालत की लखनऊ बेंच ने मामले को 21 अप्रैल के सप्ताह के लिए सूचीबद्ध करने का आदेश दिया है। यह आदेश न्यायमूर्ति एआर मसूदी और एके श्रीवास्तव ने कर्नाटक स्थित भाजपा कार्यकर्ता एस. विघ्नेश शिशिर द्वारा दायर एक जनहित याचिका (पीआईएल) पर सुनवाई करते हुए जारी किया, जिसमें आरोप लगाया गया है कि गांधी के पास ब्रिटिश नागरिकता भी है। याचिकाकर्ता का दावा है कि उसके पास ऐसे दस्तावेज हैं जो साबित करते हैं कि राहुल गांधी एक ब्रिटिश नागरिक हैं और इसलिए भारत में चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य हैं। ●

पर्यावरण मंत्रालय द्वारा माइक्रोप्लास्टिक कार्य योजना लागू

राष्ट्रीय हरित अधिकरण (एनजीटी) के निर्देशों के बाद, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की माइक्रोप्लास्टिक को संबोधित करने वाली कार्य योजना अब लागू की जा रही है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी) ने 26 मार्च, 2025 को एनजीटी को सूचित किया कि वह योजना का क्रियान्वयन कर रहा है। इस योजना में प्लास्टिक पैकेजिंग के लिए विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ईपीआर) के लिए दिशानिर्देश शामिल हैं। ईपीआर उत्पादकों को उनके उत्पादों को पर्यावरणीय रूप से उनके जीवन चक्र के अंत तक प्रबंधित करने के लिए जवाबदेह ठहराता है। ●

क्या भारत की न्यायपालिका वास्तव में निष्पक्ष है?

दिल्ली उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति यशवंत वर्मा के आवास पर हाल ही में हुई आग की घटना, जिसमें जली हुई नकदी मिली, ने भारत की न्यायपालिका के भीतर भ्रष्टाचार के बारे में चिंताओं को फिर से जगा दिया है। हालांकि न्यायमूर्ति वर्मा का दावा है कि यह एक साजिश है, मुख्य न्यायाधीश संजीव खन्ना ने जांच के लिए एक समिति का गठन किया है। यह घटना न्यायिक प्रणाली के भीतर जवाबदेही, स्वतंत्रता और नियुक्ति प्रक्रियाओं के बारे में चल रहे सवालों को उजागर करती है। ●

आरएसएस @ 100: भारत के संविधान, ध्वज और जाति पर बदलते विचार

जैसे-जैसे आरएसएस अपनी शताब्दी के करीब पहुंच रहा है, भारतीय संविधान, राष्ट्रीय ध्वज और जाति व्यवस्था के प्रति इसके ऐतिहासिक रुख पर छानबीन तेज हो गई है। आलोचनाएँ संविधान की उत्पत्ति और प्रासंगिकता पर सवाल उठाने वाले अतीत के बयानों को उजागर करती हैं। आरएसएस के एक प्रमुख नेता एम.एस. गोलवलकर ने इसे 'एक बोझिल और विषम संयोजन' माना, जिसमें विशिष्ट रूप से भारतीय तत्वों का अभाव था। ●

स्वास्थ्य व उत्पादकता के लिए चुनौती बन रहा है बढ़ता तापमान

जैसे-जैसे तापमान बढ़ रहा है, घरों को ठंडा रखना स्वास्थ्य, उत्पादकता और यहां तक कि जीवित रहने के लिए महत्वपूर्ण है। 5 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि 2.3 बिलियन लोगों को अत्यधिक गर्मी के संपर्क में ला सकती है, जो 2030 के दशक तक संभावित रूप से पहुंच सकता है यदि कार्बन उत्सर्जन को कम नहीं किया जाता है। गर्मी से पहले ही सालाना लगभग 12,000 मौतें हो जाती हैं। ●

दिल्ली बजट यमुना सफाई, महिला कल्याण पर केंद्रित

दिल्ली की वित्त मंत्री रेखा गुप्ता ने 2025-26 के लिए 1 लाख करोड़ का बजट पेश किया, जो पिछले वर्ष की तुलना में 31.5% की वृद्धि है। बजट बिजली, पानी और सड़कों सहित 10 क्षेत्रों को प्राथमिकता देता है, पूंजीगत व्यय को दोगुना कर 28,000 करोड़ कर दिया गया है। यमुना नदी की सफाई के लिए 500 करोड़ का महत्वपूर्ण आवंटन किया गया है, जिसमें 500 करोड़ की लागत से 40 सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट बनाने और 250 करोड़ में पुरानी सीवर लाइनों को बदलने की योजना है। ●

ऑक्सफोर्ड में लगे ममता बनर्जी के खिलाफ नारे- 'चले जाओ'

पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी को ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के केलॉग कॉलेज में अपने भाषण के दौरान बाधाओं का सामना करना पड़ा, जहाँ उपस्थित लोगों ने "चले जाओ" के नारे लगाए। एसएफआई, एक वामपंथी छात्र संगठन, ने जिम्मेदारी का दावा किया, जबकि भाजपा ने विरोध प्रदर्शन का श्रेय "बंगाली हिंदुओं" को दिया। हूटिंग तब शुरू हुई जब बनर्जी ने पश्चिम बंगाल के औद्योगीकरण पर चर्चा की, टाटा के नैनो प्लांट के स्थानांतरण के बारे में सवाल उठाए गए। एक प्रशिक्षु डॉक्टर के बलात्कार और हत्या के बारे में पूछे जाने पर स्थिति और बढ़ गई। बनर्जी ने वामपंथियों पर घटना का राजनीतिकरण करने का आरोप लगाया, "अति-वाम और उनके सांप्रदायिक दोस्तों" को दोषी ठहराया, जबकि टीएमसी ने उन पर भाजपा-सीपीएम गठबंधन का आरोप लगाया। ●

सिकुड़ रहा है छत्तीसगढ़ में नक्सली प्रभाव

छत्तीसगढ़ में भारतीय सुरक्षा बलों के साथ मुठभेड़ में कम से कम 16 माओवादी मारे गए हैं, जहां हाल के महीनों में माओवादियों के खिलाफ अभियान तेज हो गया है, जिसके परिणामस्वरूप सैकड़ों मौतें हुई हैं। पुलिस ने बताया कि माओवादी सुकमा जिले में मारे गए, जब सुरक्षा बलों ने माओवादी ठिकानों के बारे में खुफिया जानकारी के आधार पर जंगलों पर छापा मारा। सुकमा के पुलिस प्रमुख पी. सुंदरराज ने को बताया, 'हमने अब तक 16 माओवादियों के शव बरामद किए हैं।' ●

बिहार में अश्लील भोजपुरी गाने प्रतिबंधित: उल्लंघन करने पर जेल

बिहार पुलिस अब सार्वजनिक रूप से दोहरे अर्थ वाले या अश्लील गीतों वाले भोजपुरी गाने बजाने वालों को जेल भेजेगी। इस पहल का उद्देश्य महिलाओं की गरिमा और सुरक्षा की रक्षा करना है। अभिनेत्री नीतू चंद्रा बिहार पुलिस को जागरूकता बढ़ाने में मदद कर रही हैं और महिलाओं से इस तरह की घटनाओं की रिपोर्ट अपने स्थानीय पुलिस स्टेशन में करने का आग्रह करती हैं, गोपनीयता का वादा करती हैं। पत्रकार काजल शर्मा ने भोजपुरी संगीत में अश्लीलता में वृद्धि पर ध्यान दिया, और इसकी तुलना पहले की साफ फिल्मों से की। बैंक कर्मचारी संदीप ओझा का कहना है कि महिलाओं को अक्सर इस तरह के गानों के कारण सार्वजनिक परिवहन में उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। ●

श्रीराजेश, संपादक

क्वाड भारत की सुरक्षा का अभेद्य दुर्ग

मोदी सरकार के तीसरे कार्यकाल में क्वाड को एक मजबूत सुरक्षा तंत्र में बदलने की संभावना क्षितिज पर मंडरा रही है।

क्वाड, अर्थात् क्वाड्रिलेटरल सिक्योरिटी डायलॉग, एक ऐसा समूह है जो भारत के साथ अमेरिका, जापान, और ऑस्ट्रेलिया को एक मंच पर लाता है। इसका ध्येय इंडो-पैसिफिक क्षेत्र में स्थिरता और अभेद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना है। क्वाड का विचार, जापान के पूर्व प्रधानमंत्री शिंजो आबे की दूरदर्शिता का परिणाम है, जो चीन की बढ़ती सैन्य शक्ति से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने के लिए एक बहुपक्षीय मंच की आवश्यकता को महसूस करते थे। क्वाड केवल आर्थिक और तकनीकी सहयोग का माध्यम नहीं है, बल्कि सामरिक सुरक्षा की दृष्टि से भी एक महत्वपूर्ण शक्ति बनकर उभरा है। हालांकि, मोदी सरकार अब तक इसे सैन्य गठबंधन के रूप में चित्रित करने से सतर्कता बरतती रही है, जो चीन के साथ जारी तनाव के बावजूद, भारत की परिपक्व और सुविचारित कूटनीति का प्रतीक है।

भारत की क्वाड को सैन्य हस्तक्षेप से दूर रखने की रणनीति 2017 में डोकलाम विवाद के दौरान स्पष्ट रूप से दिखाई दी, जब भारत और चीन के संबंध रसातल में थे। इस गंभीर टकराव के बावजूद, भारत ने क्वाड को सीधे सैन्य कार्रवाई में सम्मिलित नहीं किया, जो भारत की रणनीतिक स्वायत्तता को अक्षुण्ण रखने और क्षेत्रीय शक्ति संतुलन को बनाए रखने की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। भारत एक विशेष गुट में बंधने के बजाय एक स्वतंत्र और संतुलित शक्ति के रूप में अपनी भूमिका को मजबूत करना चाहता है।

क्वाड के सैन्यीकरण से दूरी बनाए रखने के बावजूद, भारत के लिए इस समूह का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है, विशेष रूप से जब पूर्वी सीमा पर चीन की ओर से लगातार चुनौतियां मिल रही हैं। क्वाड की भूमिका अब मात्र एक संवाद मंच तक सीमित नहीं रहनी चाहिए, बल्कि इसे एक सशक्त सुरक्षा कवच के रूप में विस्तारित करने की आवश्यकता है। एक ऐसा कवच जो न केवल बाह्य आक्रमणों से रक्षा करे, बल्कि क्षेत्रीय स्थिरता और शांति को भी बढ़ावा दे।

मोदी सरकार के तीसरे कार्यकाल में क्वाड को एक मजबूत सुरक्षा तंत्र में बदलने की संभावनाएं क्षितिज पर हैं। हालांकि, इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए केवल सैन्य गठबंधन पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं होगा। एक समग्र सुरक्षा दृष्टिकोण को अपनाने की आवश्यकता है, जो न केवल सैन्य पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करे, बल्कि राजनीतिक, आर्थिक और कूटनीतिक क्षेत्रों में भी अटूट साझेदारी स्थापित करे।

भारत का ब्रिक्स में विस्तार का समर्थन और क्वाड में सदस्यों की संख्या में वृद्धि का विरोध एक विरोधाभासी किंतु रणनीतिक निर्णय है। यह दर्शाता है कि भारत अपनी कूटनीति में संतुलन बनाए रखने और वैश्विक शक्ति वितरण में अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए सचेत है। क्वाड जैसे मंच

में अधिक देशों को शामिल करने से उसकी प्रभावी सुरक्षा क्षमता कम हो सकती है, जबकि ब्रिक्स जैसी संस्थाओं में विस्तार से वैश्विक शक्ति संतुलन में भारत की भूमिका को मजबूती मिलेगी।

क्वाड की सफलता के लिए, तथ्यों पर आधारित और निष्पक्ष जानकारी का प्रवाह अनिवार्य है। अतीत में, भारत को गलत सूचनाओं के कारण रणनीतिक मोर्चे पर नुकसान उठाना पड़ा है, खासकर 1962 के युद्ध और 1999 के कारगिल संघर्ष के दौरान। भविष्य में ऐसी त्रुटियों से बचने के लिए, भारत को अत्यंत सतर्क रहना होगा और चीन की योजनाओं को कभी भी कम नहीं आंकना चाहिए।

चीन अपनी वास्तविक मंशाओं को चतुराई से छिपाने में माहिर है, और इसीलिए भारत को अपनी सुरक्षा तैयारियों को निरंतर मजबूत करते रहना चाहिए। अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के साथ भारत की सुरक्षा साझेदारी, चीन के विस्तारवादी कदमों को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। अमेरिका के साथ एक अटूट सुरक्षा साझेदारी का महत्व भी इस संदर्भ में बढ़ जाता है। भले ही डोनाल्ड ट्रम्प की नीतियां हमेशा भारत के हितों के अनुरूप न हों, फिर भी अमेरिका के साथ घनिष्ठ संबंध बनाए रखना भारत की सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

क्वाड, भारत के लिए एक अभेद्य सुरक्षा कवच के रूप में और भी अधिक प्रभावी भूमिका निभा सकता है, बशर्ते भारत इसमें सक्रिय रूप से योगदान दे। मोदी 3.0 के कार्यकाल में भारत के पास क्वाड को एक सशक्त और सुदृढ़ सुरक्षा गठबंधन में बदलने का सुनहरा अवसर है। यह गठबंधन न केवल भारत की सुरक्षा को सुदृढ़ करेगा, बल्कि इंडो-पैसिफिक क्षेत्र में शक्ति संतुलन बनाए रखने में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। ●

srirajesh.journalist @srirajesh editor@cultcurrent.com

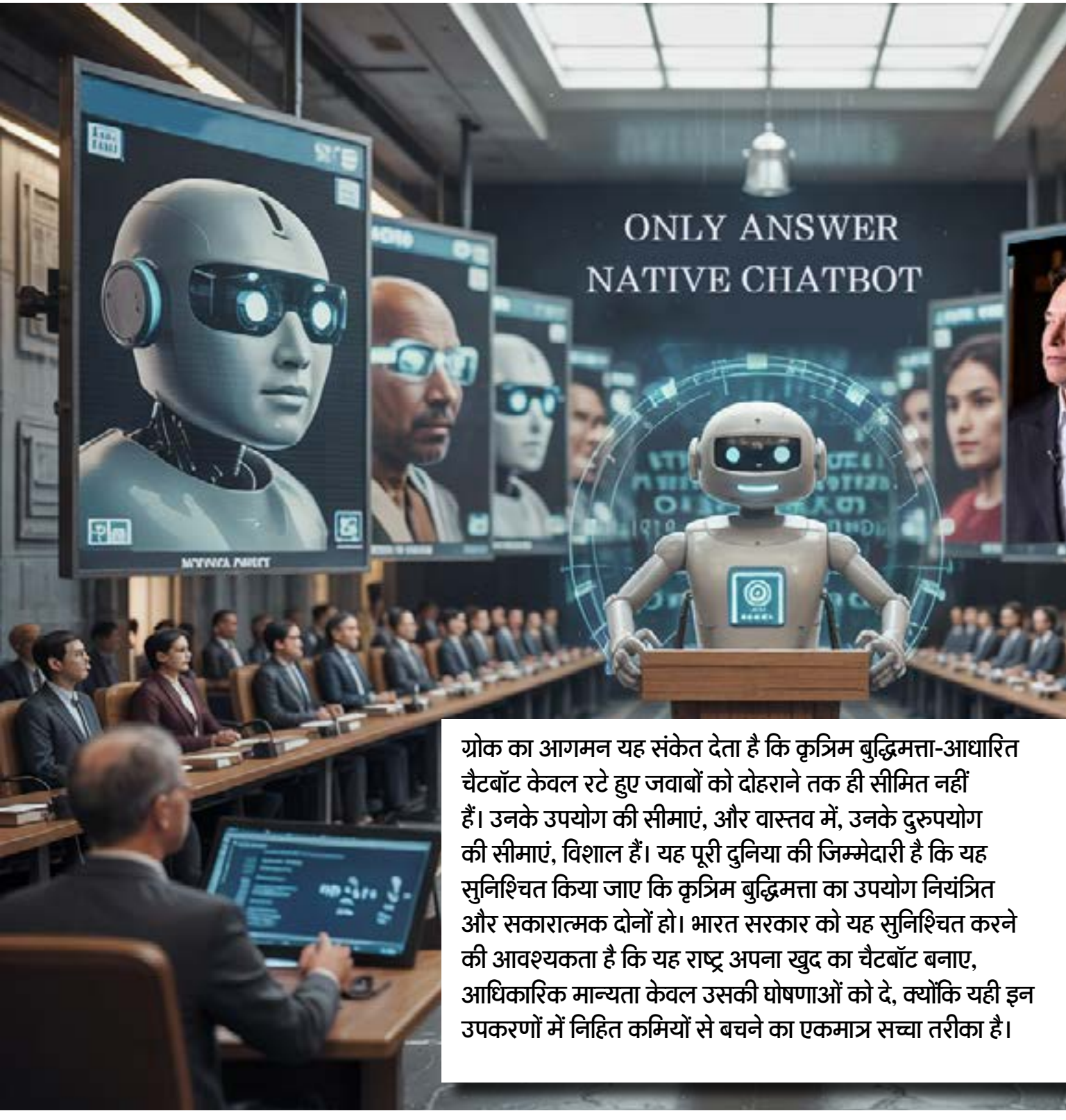

ग्रोक का आगमन यह संकेत देता है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता-आधारित चैटबॉट केवल रटे हुए जवाबों को दोहराने तक ही सीमित नहीं हैं। उनके उपयोग की सीमाएं, और वास्तव में, उनके दुरुपयोग की सीमाएं, विशाल हैं। यह पूरी दुनिया की जिम्मेदारी है कि यह सुनिश्चित किया जाए कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग नियंत्रित और सकारात्मक दोनों हो। भारत सरकार को यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि यह राष्ट्र अपना खुद का चैटबॉट बनाए, आधिकारिक मान्यता केवल उसकी घोषणाओं को दे, क्योंकि यही इन उपकरणों में निहित कमियों से बचने का एकमात्र सच्चा तरीका है।

ग्रोक देवे गारी

स्वदेशी चैटबोट ही है जवाब

संजय श्रीवास्तव

बीते दिनों पेरिस में आयोजित आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के शिखर सम्मेलन में फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों के साथ सह-अध्यक्षता करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने कहा था, कृत्रिम मेधा न सिर्फ अर्थव्यवस्था, समाज और रक्षा सुरक्षा को बल्कि राजनीति भी बदल रही है। निस्संदेह उनका कथन कृत्रिम बुद्धिमत्ता के सकारात्मक प्रभावों को लेकर था लेकिन फिलहाल इसका दूसरा और नकारात्मक पहलू तेजी से सामने आ रहा है। पिछली साल गूगल के एआई चैटबॉट जेमिनी ने अपने जवाब में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के बारे में आपत्तिजनक टिप्पणी कर दी थी, सरकार ने तुरंत कार्रवाई की। गूगल को मानना पड़ा कि जेमिनी हर बार सही नहीं हो सकता, उसकी सीमाएं है। परोक्षतः उसने माफी मांग ली और सुधार की बात दोहराई। सरकार ने भी शीघ्र ही एआई जेनेरेटेड सामग्री पर नए दिशा-निर्देश जारी कर दिये। पर इस बार एलन मस्क के चैटॅबोट ग्रोक के मामले में अभी तक यह बात समाचार पत्रों में सूत्रों के हवाले से ही कही जा रही है कि सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय मानता है

कि ग्रोक के सभी विवादित उत्तरों के लिए एलन मस्क का एक्स ही जिम्मेदार है और वह उस पर कानूनी कार्यवाई की ओर बढ चला है। उधर मंत्रालय ने सफाई दी कि उसने ग्रोक या उसकी निर्माता कंपनी एक्स को कोई नोटिस नहीं भेजा है हालांकि एक्स और ग्रोक के साथ इस मसले पर बातचीत चल रही है। भारतीय और वैश्विक स्तर पर बहुत सारे सबूत हैं कि एक्स प्लेटफार्म व्यावसायिक हितों के लिए ऐसे काम करते हैं। बेशक, मौजूदा दौर में ट्रंप के दुलारे और ग्रोक के मालिक एलन मस्क की ताकत सभी मान रहे हैं लेकिन सच तो यह है कि सरकार को ग्रोक के मामले में एक्स पर इतना सख्त रुख अपनाना चाहिये कि इससे ऐसे दूसरे चैटॅबॉट निर्माताओं को भविष्य के लिए सबक मिले।

कुछ लोग इस तर्क के विरुद्ध हो सकते हैं और वे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सच को स्वीकारने की ताकत वगैरह की रट लगा सकते हैं। ऐसी सोच को प्रतिगामी, विज्ञान विरुद्ध तथा तकनीकि विकास के खिलाफ कह सकते हैं। पर बात यहां इस तरह के सैद्धांतिक बहस की नहीं बल्कि बनावटी बुद्धिमत्ता के भविष्यगत व्यावहारिक दुष्परिणामों को लेकर है जो मानव पर मशीनी हमले और उनके प्रभुत्व के प्रतिकार के बतौर देखा जाना चाहिये। सत्य वचन सदैव प्रशंसनीय है, पर अप्रिय सत्य वाचन के लिये मनुष्यों हेतु कुछ संयम नियत हैं इसके बावजूद कठोर सत्य का उद्घाटन न सिर्फ स्वागत योग्य होना चाहिये बल्कि उसे सदैव स्वीकृति देना श्रेयस्कर होगा क्योंकि उसी से सुधार और विकास संभव है, वह चाहे सामाजिक, राजनीतिक क्षेत्र हो या वैज्ञानिक अथवा कोई भी। लेकिन यह तर्क किसी, निरपेक्ष मनुष्य के लिए है, ऐसी मशीनों के लिये नहीं जो किसी दूसरे के द्वारा निर्मित, धारणा विशेष से प्रेरित हो सकती हों, जिससे पक्षपातपूर्ण व्यवहार की आशंका हो। यह आशंका निर्मूल भी नहीं है। भिन्न प्रकार के चैटबॉट से यदि एक ही प्रश्न किए जाते हैं तो उनके उत्तर बहुधा एक जैसे होते हुए भी भिन्न शैली में और अलग भाव लिये होते हैं। यह उस प्रविधि तथा आंकड़ों पर निर्भर होता है जिसके तहत उन्हें बनाया गया है। इसमें संदेह नहीं कि कल

को ये उत्तर और भी अलग निहितार्थों और आशय विशेष से भरे हो सकते हैं। ग्रोक या एक्स के विरुद्ध समुचित कार्यवाई मात्र इसलिये नहीं कि ग्रोक के उत्तर सरकार, भाजपा, उसके मातृ संगठन, जुड़े नेता तथा समर्थकों को असहज कर रहे हैं। इस तरह के चैटॅबॉट किसी अन्य सरकार या सत्ता के लिए कोई दूसरा व्यवहार करेंगे यह तय नहीं। चैटबॉट यदि लोकतांत्रिक सरकारों की व्यवस्थागत कमियों को तार्किक तौर पर सामने लाती है तो उसका सर्वदा स्वागत है लेकिन इसकी कोई गारंटी नहीं कि वह यह निष्पक्ष तरीके से कर रहा है, वह किसी दुर्भावनापूर्ण मंतव्य या नियत एजेंडे से प्रभावित नहीं। ऐसे में जिस भी सरकार के समय ऐसी तकनीकि प्रवृत्ति उभरी है उसके द्वारा इसका पर्याप्त विरोध आवश्यक है ताकि सरकार देश समाज और उसके साथ राष्ट्र राजनीति को भी चैटबॉट के जवाबों से बाहर आने वाले इस तरह के दूरगामी दुष्परिणामों, आसन्न संकटों से देश समाज को बचाने का अपना महती दायित्व निभा सके।

चैटबॉट के क्षेत्र में अमेरिकी कंपनियों का बोलबाले को चीन और दूसरे देशों की कंपनियों ने चुनौती दी है। पिछले कुछ महीनों से चैटबॉट को लेकर रेस तेज हुई है। सऊदी अरब ने भी अपना चैटबॉट रेयान उतारा है। रेयान तो महज बाजार विश्लेषक है परंतु दूसरे तमाम चैटबॉट जो आने वाले हैं उनके बारे में सबसे बड़ी चिंता यह है कि इनको बनाने वाले लोग इसमें अपनी पसंद, नापसंद के आंकड़े डाल सकते हैं। इससे इनके जवाब अथवा फैसले एकतरफा हो सकते हैं। चूंकि ग्रोक के बाद यह साबित हो गया है कि ये रटे रटाए जवाब नहीं देते बल्कि सोच समझ कर टिप्पणी करते हैं, ये जनमत को प्रभावित कर सकते हैं। इसलिए ज़रूरी है कि इनका इस्तेमाल जिम्मेदारी से भरा और सावधानी से हो। यदि कृत्रिम बुद्धिमत्ता पर आधारित इसी तरह के दूसरे अनियंत्रित श्रेणी के चैटबॉट आने शुरू हुए तो सरकारें हमेशा संकट में बनी रहेंगी, भिन्नताओं से भरे भारतीय समाज में घृणा और विद्वेष फैलाना आम बात हो जायेगी। विगत दिनों भारतीय सेना के लिए विशेष एलएलएम यानी लॉन्ग लैंग्वेज मॉडल, बनाने की बात चली जो एक तरह से चैटबोट सरीखा ही काम आयेगा लेकिन मात्र सेना के लिये। सेना ने कहा कि उसे जीरो बायस, जीरो गार्डरेल के साथ यह एलएलएम

संभव है कि ग्रोक चैटॅबॉट के तुर्की ब तुर्की, चुटीले, बेबाक उत्तर वर्तमान में साहसी, सत्य और मज़ेदार लग रहे हों परंतु भविष्य की ओर देखें और इस तकनीकी परिदृश्य की गहराई से विवेचन करें तो इसका आकलन डरा सकता है।

चाहिये। मतलब यह कि उसे बिना किसी पाबंदी के बेझिझक और लाग लपेट रहित,साफ सही, राय चाहिये। जिस भी चैटबोट को इंटरनेट के सारे आंकड़े के साथ डेटा ट्रेन अथवा प्रशिक्षित करने के बाद उसको क्यूरेट करने फिल्टर लगाने, ताकतवर गार्ड रेल लगाने का काम होगा वह उस मॉडल का चैटबोट उतना ही संभल कर और घुमावदार जवाब देगार जिसमें फिल्टर और गार्ड रेल को जानबूझ कर कमजोर रखा गया होगा वह अधिकतर विवादास्पद और बेबाक बयान देने वाला होगा। ग्रोक कमोबेश ऐसा ही है।

संभव है कि ग्रोक चैटॅबॉट के तुर्की ब तुर्की, चुटीले, बेबाक उत्तर वर्तमान में साहसी, सत्य और मज़ेदार लग रहे हों परंतु भविष्य की ओर देखें और इस तकनीकी परिदृश्य की गहराई से विवेचन करें तो इसका आकलन डरा सकता है। ऐसे चैटबोट नियंत्रित नहीं हुए तो वे अराजकता को जन्म देंगे। जो सरकारों के लिये ही नहीं देश समाज और जनता के लिये नुकसानदायक साबित होगा। ऐसे में प्रधानमंत्री की इस बात को याद रखना चाहिये कि, एआई निर्मित तकनीकि उपायों की संचालन व्यवस्था और संबंधित मानकों को इस तरह स्थापित करना होगा कि वे हमारे साझा मूल्यों को बनाए रखें, जोखिमों को दूर करें और आपसी भरोसे का निर्माण करें। इसके लिए सामूहिक वैश्विक प्रयासों की आवश्यकता है। जबकि ग्रोक का मामला इसके ठीक उलट है, इसलिये प्रधानमंत्री की बातों को ध्यान में रखते हुए एक्स पर कठोर कार्रवाई अत्यावश्यक लगती है, यह अलग तथ्य है कि भारत के पास इसके लिए उचित क़ानूनी प्रावधान अभी तैयार नहीं है। फिर भी हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि बनावटी बुद्धि का इस्तेमाल लोकतंत्र को मज़बूत करने के लिए हो, न कि उसे कमज़ोर करने के लिए। उम्मीद है कि सितंबर में जब स्वदेशी चैटबॉट आयेगा तब उसे देश का एकमात्र आधिकारिक चैटबॉट घोषित कर बाकी से मिले जवाब को सरकार अमान्य घोषित कर दे।

MİLLET
İRADESİNE
SAHİP
ÇIKIYOR

Yaşasın
DEVRİM!
Yaşasın
CUMHURİYET!
BU PİSLİĞİ
DEVRİM
TEMİZLER
DEVRİM
GELECEK!
HUR

तुर्की में लोकतंत्र

एर्दोआन के खिलाफ भड़का

जनाक्रोश

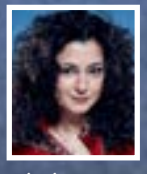

एजे तेमलकुरान

बीते 22 वर्षों से सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत करने, तमाम सरकारी संस्थाओं पर नियंत्रण करने और तुर्की के नागरिकों पर अपनी इस्लामोफासीवादी सोच थोपकर उन्हें कट्टर अनुयायी बनाने के गंभीर प्रयासों और दमन के बाद, अब तुर्की, राष्ट्रपति रेचेप तैय्यप एर्दोआन की तानाशाही के खिलाफ उठ खड़ा हुआ है। देश भर के शहरों में, यहां तक कि उन इलाकों में भी जिन्हें शासन का गढ़ माना जाता है, विरोध प्रदर्शनों का सिलसिला जारी है।

तुर्की, एक ऐसा राष्ट्र जिसकी जड़ें न केवल समृद्ध इतिहास और विविध सांस्कृतिक संगम में गहरी हैं, बल्कि जो भू-राजनीतिक रूप से पूर्व और पश्चिम के बीच एक महत्वपूर्ण पुल भी है, वर्तमान में एक गहन राजनीतिक और सामाजिक मंथन के दौर से गुज़र रहा है। यह उथल-पुथल कोई आकस्मिक घटना नहीं, बल्कि वर्षों से सुलग रही चिंगारियों का प्रस्फुटन है। हाल ही में, देश के सबसे बड़े शहर और आर्थिक केंद्र, इस्तांबुल के लोकप्रिय मेयर एक्रेम इमामोग्लू की विवादास्पद गिरफ्तारी ने इस सुलगती आग में घी डालने का काम किया है। इसने न केवल देश की राजनीति में भूचाल ला दिया है, बल्कि राष्ट्रपति रेचेप तैयप एर्दोगन के लगभग दो दशकों के शासन के खिलाफ़ विरोध की एक नई और शक्तिशाली लहर को भी जन्म दिया है। तुर्की की वर्तमान जटिल राजनीतिक स्थिति, समाज में गहरे पैठे विभाजन और देश के भविष्य की अनिश्चित संभावनाओं का गहन विश्लेषण आज के संदर्भ में अनिवार्य हो गया है।

एक्रेम इमामोग्लू, जिन्हें व्यापक रूप से राष्ट्रपति एर्दोगन के सबसे प्रबल राजनीतिक प्रतिद्वंद्वियों में से एक माना जाता है, का राजनीतिक उदय अपने आप में महत्वपूर्ण रहा है। इस्तांबुल जैसे शहर का मेयर बनना, जो लंबे समय तक एर्दोगन की अपनी पार्टी का गढ़ रहा था, अपने आप में एक बड़ी राजनीतिक उपलब्धि थी। इमामोग्लू की लोकप्रियता उनकी समावेशी शैली और शहरी प्रशासन पर ध्यान केंद्रित करने से बढ़ी। हालाँकि, उन पर लगाए गए भ्रष्टाचार और आतंकवाद से संबंधित अस्पष्ट आरोप कई पर्यवेक्षकों को राजनीति से प्रेरित लगते हैं। उनकी गिरफ्तारी, जिसे विपक्षी दलों के गठबंधन ने लगभग एक स्वर में 'न्यायिक तख्तापलट' या 'राजनीतिक प्रतिशोध' करार दिया है, ने इन दलों को अभूतपूर्व रूप से एकजुट होने का अवसर प्रदान किया है। यह घटना एर्दोगन सरकार की बढ़ती अधिनायकवादी प्रवृत्तियों, न्यायपालिका की स्वतंत्रता पर बढ़ते दबाव और लोकतांत्रिक संस्थाओं के क्षरण को स्पष्ट रूप से उजागर करती है। विशेषज्ञों का मानना है कि यह कार्रवाई 2028 के आगामी चुनावों से पहले एर्दोगन द्वारा अपने सबसे शक्तिशाली संभावित प्रतिद्वंद्वी को रास्ते से हटाने और विपक्ष को हतोत्साहित करने की एक सुनियोजित रणनीति का हिस्सा हो सकती है।

रेचेप तैयप एर्दोगन का तुर्की की राजनीति पर दबदबा लगभग दो दशकों से अधिक का है। 2003 से 2014 तक प्रधानमंत्री और उसके बाद 2014 से राष्ट्रपति के रूप में, उन्होंने देश का नेतृत्व किया है। उनके शुरुआती शासनकाल में, तुर्की ने निसंदेह प्रभावशाली आर्थिक वृद्धि दर्ज की। बड़े पैमाने पर बुनियादी ढांचा परियोजनाएं, जैसे नए हवाई अड्डे, पुल और राजमार्ग, निर्मित हुए और लाखों लोग गरीबी से बाहर निकले। इसने एर्दोगन को एक विशाल जनाधार प्रदान किया। हालाँकि, विशेष रूप से 2016 के असफल तख्तापलट के प्रयास के बाद, उनके शासनकाल में लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्वतंत्रता में नाटकीय गिरावट देखी गई है। प्रेस की स्वतंत्रता पर अंकुश लगा, हजारों शिक्षाविदों, पत्रकारों, न्यायाधीशों और विपक्षी कार्यकर्ताओं को या तो गिरफ्तार किया गया या पद से हटा दिया गया।

आधुनिक तुर्की गणराज्य के संस्थापक, मुस्तफा कमाल अतातुर्क ने देश को एक धर्मनिरपेक्ष, पश्चिमीकृत और उदार राष्ट्र बनाने की दिशा में निर्देशित किया था। उनके सुधारों ने तुर्की समाज के ताने-बाने को गहराई से प्रभावित किया। हालाँकि, एर्दोगन के नेतृत्व में, विशेषकर उनके जस्टिस एंड डेवलपमेंट पार्टी के शासनकाल में, देश ने एक विपरीत दिशा में यात्रा की है, जहाँ सार्वजनिक जीवन और राजनीति में इस्लामिक मूल्यों और पहचान को अधिक प्रमुखता दी गई है। यह वैचारिक बदलाव समाज में एक गहरे विभाजन का कारण बना है। एक ओर वे लोग हैं जो एर्दोगन के इस्लामी झुकाव और पारंपरिक मूल्यों के पुनरुत्थान का समर्थन करते हैं, वहीं दूसरी ओर एक बड़ा वर्ग है जो अतातुर्क की धर्मनिरपेक्ष विरासत, उदारवादी मूल्यों और पश्चिमीकरण का पक्षधर है। यह विभाजन केवल राजनीतिक बहसों तक सीमित नहीं है, बल्कि जीवनशैली, शिक्षा, कला और सामाजिक व्यवहार जैसे दैनिक जीवन के

पहलुओं में भी परिलक्षित होता है। विशेष रूप से, महिलाओं के अधिकारों और लैंगिक समानता जैसे मुद्दों पर यह दरार और गहरी हुई है। इस्तांबुल कन्वेंशन (घरेलू हिंसा और महिलाओं के खिलाफ हिंसा की रोकथाम पर यूरोपीय परिषद का समझौता) से तुर्की का बाहर निकलना इस विभाजन का एक ज्वलंत उदाहरण है, जिसने उदारवादी और नारीवादी समूहों को नाराज किया है। यह सामाजिक तनाव राष्ट्रीय एकता और समरसता के लिए एक बड़ी चुनौती बन गया है। इमामोग्लू की गिरफ्तारी के तत्काल बाद, इस्तांबुल, राजधानी अंकारा और इज़मीर जैसे प्रमुख शहरों सहित देश के कई हिस्सों में स्वतःस्फूर्त विरोध प्रदर्शन भड़क उठे। लाखों लोग सड़कों पर उतर आए, जो सरकार की कार्रवाई के खिलाफ अपने गुस्से और हताशा का इजहार कर रहे थे। इन प्रदर्शनों का पैमाना और तीव्रता 2013 के प्रसिद्ध गेजी पार्क विरोध प्रदर्शनों की याद दिलाती है, जो शुरुआत में एक छोटे पर्यावरणीय मुद्दे से शुरू होकर तत्कालीन एर्दोगन सरकार के खिलाफ एक बड़े पैमाने पर नागरिक विद्रोह में बदल गया था। वर्तमान प्रदर्शनकारी मुख्य रूप से इमामोग्लू की रिहाई, न्यायिक स्वतंत्रता की बहाली और राष्ट्रपति एर्दोगन के इस्तीफे की मांग कर रहे हैं। ये प्रदर्शन स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि तमाम दबावों और दमन के बावजूद, तुर्की का नागरिक समाज अपने लोकतांत्रिक अधिकारों और मूल्यों की रक्षा के लिए अब भी सक्रिय रूप से संगठित होने और आवाज़ उठाने में सक्षम है। हालाँकि, सरकार ने इन प्रदर्शनों पर अपनी चिरपरिचित शैली में कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त की है, जिसमें पुलिस बल का प्रयोग और प्रदर्शनकारियों की गिरफ्तारी शामिल है, जिससे स्थिति और अधिक तनावपूर्ण हो गई है। इमामोग्लू की गिरफ्तारी और तुर्की में घटते लोकतांत्रिक स्थान पर अंतर्राष्ट्रीय समुदाय, विशेषकर तुर्की के पारंपरिक पश्चिमी सहयोगियों, ने चिंता व्यक्त की है। यूरोपीय संघ और संयुक्त राज्य अमेरिका के अधिकारियों ने संयम बरतने और कानून के शासन का सम्मान करने का आह्वान किया है। मानवाधिकार संगठनों ने इसे राजनीतिक विरोध को दबाने का एक और उदाहरण बताया है।

तुर्की में अगला निर्धारित राष्ट्रपति चुनाव 2028 में होना है। हालाँकि, इमामोग्लू की गिरफ्तारी और उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न हुए राजनीतिक संकट ने देश के राजनीतिक परिदृश्य को अप्रत्याशित रूप से बदल दिया है। यदि विरोध प्रदर्शन व्यापक और निरंतर बने रहते हैं, और सबसे महत्वपूर्ण बात, यदि विभिन्न विपक्षी दल अपनी एकजुटता बनाए रखने में कामयाब होते हैं और एक विश्वसनीय विकल्प प्रस्तुत करते हैं, तो समय से पहले चुनाव की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है। यह स्थिति तुर्की में एक संभावित लोकतांत्रिक पुनर्स्थापन या कम से कम सत्ता समीकरणों में महत्वपूर्ण परिवर्तन की संभावना को जन्म दे सकती है, जो न केवल तुर्की के बल्कि पूरे क्षेत्र के भविष्य के लिए निर्णायक साबित होगा।

एजे तेमलकुरान, एक तुर्की पत्रकार और राजनीतिक टिप्पणीकार हैं, और 'हाउ टू लूज अ कंट्रीः द 7 स्टेप्स फ्रॉम डेमोक्रेसी टू डिक्टेटरशिप' नामक पुस्तक की लेखिका हैं।

जलज श्रीवास्तव

स्वतंत्र पत्रकार आनंद दत्त ने इंडियास्पेंड के लिए अपनी मार्मिक लेखनी से झारखंड की बदहाल स्वास्थ्य व्यवस्था की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। उनकी रिपोर्ट, "झारखंडः खाट की बैसाखी पर टिका आदिवासियों का स्वास्थ्य," विश्व की पांचवीं अर्थव्यवस्था होने का दर्प भरने वाले भारत को यथार्थ का दर्पण दिखाती है। एशिया की तीसरी शक्ति होने के गर्व से अभिभूत राष्ट्र को हाशिये पर पड़ी जिंदगियों को सँवारने का आह्वान करती है। अमरमुनि नागेसिया के असहनीय कष्ट के माध्यम से, यह रिपोर्ट हर विकास सूचकांक को कड़वी सच्चाई से अवगत कराती है। इंडियास्पेंड के पोर्टल पर 18 दिसंबर, 2024 को प्रकाशित होने के तीन महीने बाद भी, स्थितियों में रंचमात्र भी परिवर्तन नहीं हुआ है। तेज बहादुर और विकास आर्यन की संवेदी तस्वीरों ने इस रिपोर्ट को जीवंत कर लोगों की संवेदनाओं को झकझोरने का प्रयास किया है। यह सिर्फ अमरमुनि की कहानी नहीं है, बल्कि उन हजारों आदिवासी परिवारों की व्यथा है जिनके लिए स्वास्थ्य सेवाएँ एक स्वप्न मात्र हैं। इसी उद्देश्य से, हम इस कहानी को अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाने के लिए पुनः साभार परिमार्जित संस्करण प्रकाशित कर रहे हैं, ताकि यह विडंबना व्यापक स्तर पर संज्ञान में आए...

विकास की राह पर छूटे गांव

जीवन की हरीतिमा से आच्छादित झारखंड की लाल मिट्टी, आज आदिवासियों के दर्द और लाचारी की गवाह बनी हुई है। यहाँ, विकास की किरणें अब तक नहीं पहुँची हैं, और आदिवासी समुदाय, सदियों से अपनी जड़ों से जुड़े रहने के बावजूद, आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित हैं। यहाँ स्वास्थ्य सेवाएँ खाट की बैसाखी पर टिकी हैं, और हर दिन, हर गर्भवती महिला, मृत्यु के मुँह में झाँकती हुई, अपने बच्चे को जन्म देने की आस में एक अनिश्चित यात्रा पर निकलती है।

बीते 17 अक्टूबर, 2024 की सुबह, आठ महीने की गर्भवती अमरमुनि नागेसिया के लिए भी एक ऐसी ही सुबह थी। यह सुबह सिर्फ एक दिन की शुरुआत नहीं थी, बल्कि दो जिंदगियों को दांव पर लगाने का एक कठिन फैसला था। एक तरफ स्वयं अमरमुनि की जान थी, और दूसरी तरफ, उनकी कोख में पल रहा बच्चा, जो अभी दुनिया की रोशनी देखने को भी तरस रहा था। अमरमुनि ने अपने ढाई साल के बेटे को प्यार से खाना खिलाया, उसे नहीं पता था कि उसकी माँ आज एक ऐसी यात्रा पर जा रही है, जहाँ से वापसी की कोई गारंटी नहीं है। उसने खुद को तैयार किया, यह तैयारी किसी उत्सव के लिए नहीं, बल्कि एक भयावह यात्रा के लिए थी।

यह तैयारी थी, चार घंटे तक एक टोकरी में बैठकर अस्पताल जाने की। यह टोकरी, कोई आलीशान पालकी नहीं थी, बल्कि लकड़ी और रस्सी से बनी एक अस्थायी व्यवस्था थी, जिसे चार लोग बारी-बारी से अपने कंधों पर उठाकर ले जाने वाले थे। अमरमुनि के लिए यह कोई नई बात नहीं थी। ढाई साल पहले, जब उनका पहला बच्चा होने वाला था, तब भी उन्हें इसी तरह की मुश्किलों का सामना करना पड़ा था।

यह कहानी सिर्फ अमरमुनि की नहीं है, बल्कि झारखंड के उन हजारों आदिवासी परिवारों की है, जिनके लिए स्वास्थ्य सेवाएँ एक सपने से भी बढ़कर हैं। यह कहानी उस भारत की कड़वी सच्चाई है, जहाँ हर दसवां बच्चा बिना डॉक्टर, नर्स, दाई या किसी अन्य

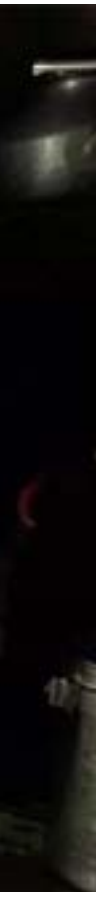

> “ट्राइबल हेल्थ इन इंडिया” रिपोर्ट के अनुसार, 81.8% जनजातीय महिलाओं को प्रसवपूर्व केवल एक जाँच मिलती है, वहीं केवल 15% जनजातीय महिलाओं को तीन प्रसवपूर्व जाँच मिल पाती हैं। यह देश में किसी भी समुदाय के बीच सबसे कम दर है।

स्वास्थ्यकर्मी की मदद के पैदा होता है। यानी जन्म के समय उन्हें किसी भी तरह की स्वास्थ्य सुविधा नहीं मिलती है।

आदिवासी लोगों की बात करें तो स्थिति और भी भयावह है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 2019-21 के आँकड़ों से पता चलता है कि आदिवासी समुदाय में लगभग हर छठा बच्चा बिना किसी प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मी की मदद के पैदा होता है। झारखंड में 32 जनजातियाँ निवास करती हैं, जिनमें से आठ को विशेष रूप से कमजोर जनजातीय समूहों के रूप में वर्गीकृत किया गया है। यहाँ ऐसे बच्चों के जन्म की संख्या पूरे देश में पाँचवें नंबर पर सबसे ज़्यादा है।

भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक (सीएजी) की 2017 की एक रिपोर्ट के अनुसार, “स्वास्थ्य सेवाओं की अनुपस्थिति और परिवहन की कमी के कारण कमजोर जनजातियाँ समय पर स्वास्थ्य सुविधाओं से वंचित रह जाती हैं।” साल 2011 की जनगणना के अनुसार, राज्य में जनजातीय लोगों की आबादी 8.6 मिलियन है, जो राज्य की आबादी का 26% है। यह राष्ट्रीय आँकड़े 8.6% से तीन गुना ज़्यादा है।

अमरमुनि नागेसिया के पिता, सुखदेव नगेसिया, और गाँव के ही दो लोगों ने लकड़ी की टोकरी से पालकी बनाई और उसे रस्सियों से बाँस पर बाँध दिया। अमरमुनि को प्रसवपूर्व जाँच के लिए उनके गाँव से लगभग सात किलोमीटर दूर महुआडांर सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र ले जाना था। किसान जनजाति की 26 वर्षीय अमरमुनि नगेसिया अपने दूसरे बच्चे को जन्म देने वाली थीं।

झारखंड की राजधानी रांची से लगभग 178 किलोमीटर दूर, लातेहार जिले के महुआडांर ब्लॉक के जंगलों के बीचोबीच ग्वालखार गाँव बसा है। गाँव की आबादी लगभग 1,500 है, जिसमें ज़्यादातर लोग किसान, कोरवा और बिरिजिया जनजाति के हैं। इन समुदायों के लिए महुआडांर जाने का मतलब है, उन खतरनाक रास्तों से होते हुए निकलना, जहाँ पर कोई साइकिल तक नहीं चलती है। बारिश और खराब मौसम की स्थिति में यह रास्ता और भी जोखिम भरा हो जाता है।

“ट्राइबल हेल्थ इन इंडिया” रिपोर्ट के अनुसार, 81.8% जनजातीय महिलाओं को प्रसवपूर्व केवल एक जाँच मिलती है, वहीं केवल 15% जनजातीय महिलाओं को तीन प्रसवपूर्व जाँच मिल पाती हैं। यह देश में किसी भी समुदाय के बीच सबसे कम दर है।

अमरमुनि टोकरी में बैठ जाती हैं, और गाँव के दो लोग उसे उठाकर चल देते हैं। बड़े-बड़े पत्थर, तो कहीं कंटीले झाड़, पहाड़ की चढ़ाई को पार करना आसान नहीं है। लगभग दो घंटे लगातार चलने के बाद सब लोग एक जगह रुककर थोड़ा आराम करते हैं। थकान से चूर, उनके चेहरे पर चिंता की लकीरें साफ़ दिखाई दे रही थीं।

सुखदेव कहते हैं, “यहाँ हालात बहुत खराब हैं। बीती रात हुई बारिश ने रास्ते को और भी फिसलन भरा बना दिया है। अगर कोई फिसल गया, तो पता नहीं, माँ और बच्चे का क्या होगा।” उनकी आवाज़ में डर और लाचारी साफ़ झलक रही थी।

स्थानीय स्वास्थ्य सहिया, प्यारी नेगेसिया कहती हैं, “झारखंड में यह स्थिति आम है। यहाँ, खासकर जंगलों में रह रहे आदिवासी समुदायों के लिए स्वास्थ्य केंद्र पहुँच से काफ़ी दूर हैं।” प्यारी, जो खुद इसी समुदाय से आती हैं, इन मुश्किलों को अपनी आँखों से देखती आ रही हैं।

ग्वालखार में मई 2023 की एक घटना को याद करते हुए, 46 वर्षीय स्वास्थ्य सहिया ने बताया कि एक महिला ने घर पर ही बच्चे को जन्म दिया। उसे बहुत ज़्यादा रक्तस्राव होने लगा, तो उसे महुआडांर के प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र ले जाया गया। उसकी हालत गंभीर थी, इसलिए उसे वहाँ से लगभग 90 किलोमीटर दूर लातेहार के जिला अस्पताल में रेफर कर दिया गया। लेकिन बहुत ज्यादा रक्तस्राव के कारण अस्पताल में ही उसकी मौत हो गई। प्यारी की

आँखों में उस दिन का दर्द आज भी ताज़ा है।

प्यारी ने बताया, "तीन साल पहले एक और महिला को प्रसव के दौरान बहुत दर्द होने पर, इसी तरह टोकरी में लादकर अस्पताल ले जाया गया था। प्रसव पीड़ा तेज हो जाने पर, उसे गाँव की महिलाओं की मदद से बीच जंगल में बच्चे को जन्म देना पड़ा।"

"ट्राइबल हेल्थ इन इंडिया" रिपोर्ट के अनुसार, एक चौथाई से ज़्यादा, यानी 27% आदिवासी महिलाएँ घर पर ही बच्चे को जन्म देती हैं, जो सभी जनसंख्या समूहों में सबसे अधिक है।

चार घंटे लंबे इस फिसलन भरे पहाड़ी रास्ते पर अमरमुनि के साथ रहीं प्यारी ने बताया कि ऐसी स्थिति चाईबासा, गुमला, साहिबगंज, पाकुड़, सिमडेगा, खूंटी और यहाँ तक कि राज्य की राजधानी रांची जैसे इलाकों में भी आम है। इन इलाकों में रहने वाले आदिवासी लोग अक्सर चिकित्सा सुविधाओं के लिए ऐसे मुश्किल रास्तों और दूसरे आदिवासियों की मदद पर निर्भर रहते हैं। यह एक दुष्चक्र है, जहाँ गरीबी और अभाव, स्वास्थ्य सेवाओं से दूरी और मृत्यु का कारण बन जाते हैं।

यह पूछे जाने पर कि स्वास्थ्य केंद्र तक पहुँचने की यह समस्या कब से है, सुखदेव बताते हैं, "दो या तीन पीढ़ियों से ज़्यादा समय से ऐसा ही चलता आ रहा है। सड़क का न होना हमेशा से समस्या रहा है। हम लगातार सड़क की माँग करते आ रहे हैं, लेकिन स्थिति जस की तस है। सड़क न होने की वजह से लोग मरते हैं। हमारे गाँव के तीन या चार बच्चे पहले ही मर चुके हैं। साल 2021 में मेरी पत्नी को लकवा मार गया। हमारे पास इलाज के लिए पैसे नहीं थे, तो वह भी मर गई। हम क्या कर सकते हैं?" सुखदेव का सवाल एक चीख है, जो विकास के दावों पर सवाल उठाती है।

ये चुनौतियाँ सिर्फ़ झारखंड तक ही सीमित नहीं हैं। बीते 27 सितंबर को आंध्र प्रदेश के पिंजरीकोंडा गाँव की एक गर्भवती महिला को अस्पताल ले जाने के लिए उफ़नते बाँध से एक नाले को पार करना पड़ा था। हर साल, ऐसे कई मामले सामने आते हैं, जो देश के दूरदराज के इलाकों में स्वास्थ्य सेवाओं की बदहाली को उजागर करते हैं।

ग्वालखार जैसे वन गाँवों में सड़कों का अभाव नौकरशाही और पर्यावरण नियमों के बीच फँसा मसला है। विकास और पर्यावरण के बीच एक जटिल संघर्ष है, जिसमें आदिवासी समुदाय सबसे अधिक प्रभावित होता है।

वन और आदिवासी अधिकारों के लिए काम करने वाले 17 छोटे-बड़े स्वयंसेवी संगठनों के मंच, झारखंड वन अधिकार मंच

(जेवीएएम), और इंडियन स्कूल ऑफ बिजनेस द्वारा किए गए 2021 के एक संयुक्त सर्वेक्षण में पाया गया कि झारखंड में वन क्षेत्रों में 14,850 गाँव हैं।

झारखंड वन अधिकार मंच के संयोजक, सुधीर पाल के अनुसार, अगर प्रति गाँव 100 लोगों को भी लिया जाए, तो इस अनुमान के साथ भी लगभग 14.8 लाख लोग इन दूरदराज के क्षेत्रों में रहते हैं, और उनमें से कई आपात स्थिति में अस्पतालों तक पहुँचने के लिए खाट जैसे अस्थायी परिवहन पर निर्भर रहने के लिए मजबूर हैं।

हाल ही में झारखंड में हुए विधानसभा चुनावों में, कई लोगों ने बुनियादी ढाँचा मुहैया कराने में सरकार की विफलता का विरोध करते हुए चुनावों का बहिष्कार करने का फ़ैसला किया था। उदाहरण के लिए, बोकारो जिले के टुंडी निर्वाचन क्षेत्र के बामनाबाद गाँव और गिरिडीह जिले के बेंगाबाद ब्लॉक के ताराटांड गाँवों को ही लें। यहाँ के निवासियों ने वन गाँवों की श्रेणी में नहीं आने के चलते चुनाव का बहिष्कार किया। यह बहिष्कार, सिस्टम के प्रति आक्रोश और बदलाव की आस का प्रतीक था।

पर्यावरण मंत्रालय ने दिसंबर 2023 में संसद को बताया कि भारत में लगभग 6,50,000 गाँव हैं, जिनमें से 1,70,000 गाँव जंगलों के पास स्थित हैं। लगभग 30 करोड़ लोग अपनी आजीविका

के लिए वनों पर निर्भर हैं। वन और पर्यावरण मंत्रालय के बीच समन्वय की कमी, इन गाँवों में विकास की राह में एक बड़ी बाधा है।

संसद में साल 2021 में दिए गए जवाब में कहा गया था कि झारखंड के आदिवासी इलाकों के प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में डॉक्टरों के 142 पद खाली पड़े हैं। केंद्रीय बजट 2023-24 में 42 मंत्रालयों/विभागों के कुल योजना बजटीय आवंटन में से अनुसूचित जनजातियों के लिए विकास कार्य योजना (DAPST) निधि के रूप में 1,17,944 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं। बजट आवंटन तो होता है, लेकिन ज़मीनी स्तर पर उसका कार्यान्वयन एक बड़ी चुनौती है।

हालिया विधानसभा चुनाव 2024 में, झारखंड मुक्ति मोर्चा (झामुमो) और भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) दोनों के घोषणापत्रों में राजनीतिक वादे किए गए। इसमें 5,000 परिवारों पर एक एम्बुलेंस, प्रत्येक पंचायत में एक स्वास्थ्य उप-केंद्र, स्वास्थ्य कर्मियों के मानदेय में 50 फीसदी की वृद्धि और स्वास्थ्य सेवा में सुधार के लिए पर्याप्त धनराशि आवंटित करने जैसे वादे शामिल थे। चुनावों के दौरान किए गए वादे, अक्सर चुनावी जुमले बनकर रह जाते हैं, और आदिवासी समुदाय, हर बार नई उम्मीदों के साथ ठगा हुआ महसूस करता है।

पार्टियों के इन घोषणाओं पर सुधीर पाल कहते हैं, "ये वादे कागज़ पर तो अच्छे लगते हैं, लेकिन वे बुनियादी समस्याओं को हल करने में विफल रहते हैं। बड़ा सवाल ये हैं कि इन दूरदराज के गाँवों तक वास्तव में कैसे पहुँचा जाए। सड़कें बनाने या बुनियादी ढाँचे में सुधार की स्पष्ट योजनाओं के बिना ये वादे सिर्फ़ खोखले बयानबाज़ी बनकर रह जाते हैं।"

झारखंड के स्वास्थ्य सचिव, अजय कुमार सिंह ने इस पूरी स्थिति पर सरकार का पक्ष रखते हुए बताया कि राज्य में स्वास्थ्य सुविधा पहुँचाने के लिए मोबाइल मेडिकल यूनिट काम कर रही हैं। सिंह ने कहा, "एक तरह से ये यूनिट ओपीडी सेवाएँ देती हैं, लेकिन जिन इलाकों या गाँवों में सड़कें नहीं हैं, वहाँ ये यूनिट भी काम नहीं कर पाती हैं। ऐसे इलाकों में ग्रामीण विकास विभाग को काम करना होगा।" पूरे राज्य में 100 से ज़्यादा यूनिट काम कर रही हैं। मोबाइल मेडिकल यूनिट, एक तात्कालिक समाधान है, लेकिन स्थायी समाधान के लिए बुनियादी ढाँचे का विकास ज़रूरी है।

पिछले 15 सालों से महिला अधिकारों के लिए काम कर रहीं, ध्वनि फाउंडेशन की झारखंड स्टेट ट्रेनर, रेशमा कहती हैं कि वन क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों को लगातार नज़रअंदाज़ किया जाता रहा है।

उन्होंने कहा, "इस चुनाव में इन मुद्दों पर कुछ नहीं बोला गया। इस बार मुख्यमंत्री मैया सम्मान योजना से लाभान्वित महिलाओं ने मौजूदा सरकार के पक्ष में भारी मतदान किया है। सरकार को अब उन्हें बेहतर सड़कें और स्वास्थ्य सेवाएँ देकर जनता के प्रति अपना आभार व्यक्त करना चाहिए।"

"हमारी सरकार का मुख्य लक्ष्य हर झारखंडी की सेवा करना और उनके कल्याण को सुनिश्चित करना है, विशेष रूप से उन लोगों का जो दूर-दराज के क्षेत्रों में रहते हैं," झारखंड के मुख्यमंत्री, हेमंत सोरेन ने कहा। "चाहे वे जंगलों के गाँवों में रहते हों या अन्य दुर्गम क्षेत्रों में, उन्हें स्वास्थ्य सेवाओं की सुविधा प्रदान करना हमारी प्राथमिकता बनी हुई है।

"हम स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए एक व्यापक योजना तैयार कर रहे हैं, जिसमें स्वास्थ्य, ग्रामीण विकास और वन विभाग के समन्वय से मोटर चलने योग्य सड़कों का निर्माण शामिल है। हमारा उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि हर नागरिक, चाहे वह कितना भी दूर क्यों न हो, बिना किसी बाधा के आवश्यक चिकित्सा सुविधाओं तक पहुँच सके," उन्होंने कहा।

महिया सम्मान योजना के बारे में बात करते हुए, सोरेन ने कहा,

"यह महत्वाकांक्षी सामाजिक कल्याण योजना महिलाओं और उनके परिवारों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने पर केंद्रित है। 2,500 की मासिक वित्तीय सहायता के साथ, 50 लाख से अधिक महिलाएँ इस कार्यक्रम से लाभान्वित हो रही हैं। यह सिर्फ़ वित्तीय सहायता नहीं है—यह महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

झारखंड वन अधिकार मंच के संयोजक, जॉर्ज मोनोपल्ली ने कहा कि वन अधिकार अधिनियम 2006 में एक बड़ी खामी है। इसमें वन गाँवों में एक हेक्टेयर ज़मीन पर मकान बनाने की इजाज़त दी गई है, लेकिन सिर्फ़ 75 पेड़ काटने की अनुमति मिलती है। इससे जंगल के अंदरूनी गाँवों तक सड़कें बनाना मुश्किल हो जाता है, क्योंकि ये गाँव अक्सर मुख्य सड़क से कई किलोमीटर दूर होते हैं।

मोनोपल्ली का मानना है कि इसका समाधान एक स्पष्ट और कारगर योजना में छिपा है। उन्होंने कहा, "राज्य सरकार को सड़कों की ज़रूरत वाले क्षेत्रों की एक सूची तैयार की जानी चाहिए, उनकी दूरी मापनी चाहिए और अनुमति के लिए केंद्रीय वन मंत्रालय से संपर्क करना चाहिए।"

झारखंड के पूर्व प्रधान मुख्य वन संरक्षक (पीसीसीएफ), लाल रत्नाकर सिंह के अनुसार, "यह सही है कि वन अधिकार अधिनियम 2006 के तहत प्रति हेक्टेयर 75 पेड़ों की कटाई की अनुमति है।

"राज्य सरकार को सड़कों की ज़रूरत वाले क्षेत्रों की एक सूची तैयार की जानी चाहिए, उनकी दूरी मापनी चाहिए और अनुमति के लिए केंद्रीय वन मंत्रालय से संपर्क करना चाहिए।"

लेकिन इसके बावजूद जंगल के उन इलाकों में सड़कें बनाई गई हैं, जहाँ बहुत कम लोग रहते हैं।"

सिंह कहते हैं, "अगर सरकार और वन विभाग चाहें तो जंगल में कहीं भी ऑल वेदर रोड (बारहमासी सड़कें) बनाई जा सकती हैं। चूँकि ऐसी जगहों पर गाँव दूर-दूर पर हैं, वहाँ बहुत कम लोग रहते हैं, इसलिए सरकार उन पर ध्यान नहीं देती। यहाँ रहने वाले लोग अपनी समस्याएँ भी ठीक से उन तक नहीं पहुँचा पाते हैं।"

करीब चार घंटे पैदल चलने के बाद, सुखदेव, गाँव वाले और स्वास्थ्यकर्मी नज़दीकी सड़क पर पहुँचे, जहाँ एक एम्बुलेंस अमरमुनि का इंतज़ार कर रही थी। अमरमुनि की आँखों में थकान और राहत के मिले-जुले भाव थे।

जन स्वास्थ्य अभियान के ग्लोबल कोऑर्डिनेटर, त्यागराजन सुंदररामन का कहना है कि अगर लोगों को अस्पताल जाने के लिए चार घंटे पैदल चलना पड़े, तो यह बहुत बड़ी नाकामी है। केंद्र और राज्य सरकारों दोनों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि हर व्यक्ति के गाँव से एक किलोमीटर के अंदर सड़क हो, जो पूरे साल खुली रहे। 2011-12 में झारखंड के दूरदराज इलाकों का नक्शा बनाया गया था, ताकि गर्भवती महिलाओं के लिए अस्पताल एक घंटे के भीतर पहुँच में हों। लेकिन पैसे की कमी और सरकार की लापरवाही के कारण इस पर काम में देरी हुई है।

झारखंड के स्वास्थ्य मंत्री, डॉ. इरफान अंसारी ने हाल ही में विभाग संभाला है। उन्होंने कहा, "देखिए आठ-दस किलोमीटर सफर करने से कोई नहीं मरता है। अगर कोई मरता है तो उसे पहले से कोई न कोई गंभीर बीमारी रही होगी।" स्वास्थ्य मंत्री का यह बयान, संवेदनहीनता की पराकाष्ठा है।

वह आगे कहते हैं, "मैंने तय किया है कि डॉक्टर जिस जिले का रहने वाला है, उसे वहीं पोस्टिंग दी जाए। इससे कोई भी डॉक्टर उन इलाकों में जाने से इंकार नहीं करेगा। और साथ ही वेतन बढ़ाने पर भी बातचीत चल रही है। महुआडांर अस्पताल की स्थिति अभी मेरी जानकारी में आई है, मैं उसे बेहतर बनाने का वादा करता हूँ।"

स्वास्थ्य सहिया, प्यारी नगेसिया ने एनीमिया, पोषण संबंधी कमियों और अपर्याप्त चिकित्सा सलाह की कमी से जूझ रही, ऐसे इलाकों की गर्भवती महिलाओं के संघर्षों के बारे में भी बताया।

यूनिसेफ कहता है कि गर्भवती महिलाओं को दिन में तीन बार अच्छा और घर का बना खाना खाना चाहिए। साथ ही उन्हें हल्का नाश्ता और तीन से पाँच बार फल और सब्ज़ियाँ भी लेनी चाहिए। खाने में साबुत अनाज, प्रोटीन और हरी पत्तीदार सब्ज़ियों से भरपूर आहार ज़रूरी है। इसके अलावा आयरन, फोलिक एसिड और कैल्शियम सप्लीमेंट्स के साथ-साथ हाइड्रेशन के लिए भरपूर मात्रा में साफ़ पानी पीने की सलाह दी जाती है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (एनएचएम) के दिशा-निर्देशों के अनुसार, गर्भवती महिलाओं को टिटनेस के इंजेक्शन लगवाने, 100 फोलिक एसिड की गोलियाँ लेने और दूध से बने उत्पाद व हरी सब्ज़ियाँ खाने की सलाह दी जाती है। इन ज़रूरी चीज़ों की कमी के कारण, गर्भधारण में कई जटिलताएँ पैदा होती हैं, जिससे अक्सर प्रसव लंबा हो जाता है। ऐसे में कभी-कभी घर पर प्रसव कराना एक जोखिम भरा हो जाता है।

प्यारी कहती हैं, "अनिवार्य जाँच करवाने के लिए स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुँचना तो दूर की बात है, जब भारी बारिश होती है तो गर्भवती महिलाओं के लिए फोलिक एसिड जैसी दवाएँ भी गाँव तक पहुँचना मुश्किल हो जाता है। इसका असर गर्भ में पल रहे बच्चे पर पड़ सकता है।"

एनएफएचएस-5 के अनुसार, झारखंड ग्रामीण क्षेत्र में 5 वर्ष से कम आयु के 42% बच्चे बौने (उम्र के हिसाब से लंबाई) हैं, 22.3% बच्चे कमजोर (ऊंचाई के हिसाब से वजन) हैं, 8.8% बच्चे गंभीर रूप से कमजोर हैं, जबकि 5 वर्ष से कम आयु के 41.14% बच्चे कम वजन के हैं। कुपोषण, आदिवासी बच्चों के जीवन पर एक काला साया बनकर मंडरा रहा है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के अनुसार, गर्भवती महिलाओं को 8वें से 14वें सप्ताह (डेटिंग स्कैन) और फिर 18वें से 22वें सप्ताह (एंटे स्कैन) के बीच अल्ट्रासाउंड करवाना ज़रूरी है। इसके अलावा गर्भावस्था के दौरान हार्मोन (एचसीजी), थायरॉइड फंक्शन, शुगर लेवल, हीमोग्लोबिन और ओरल ग्लूकोज टॉलरेंस टेस्ट (ओजीटीटी) की जाँच की सलाह भी दी जाती है।

प्यारी ने कहा, "जंगलों में बसे गाँवों में गर्भवती महिलाओं के लिए इनमें से कोई भी चीज़ आसानी से उपलब्ध नहीं है।" आधुनिक चिकित्सा जाँचों की कमी, गर्भवती महिलाओं और उनके बच्चों के स्वास्थ्य को गंभीर खतरे में डालती है।

भारत में 23% आदिवासी बच्चे घर पर ही जन्म लेते हैं। एनएफएचएस-5 के अनुसार, झारखंड (ग्रामीण) में शिशु मृत्यु दर 41.4 है, वहीं नवजात मृत्यु दर 30.4 है, जबकि पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों की मृत्यु दर 1,000 जीवित जन्मों पर 49.2 है। यहाँ यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली मातृ स्वास्थ्य सेवाएँ अक्सर आदिवासी लोगों की स्वास्थ्य

संबंधी मान्यताओं और तरीकों के अनुरूप नहीं होती हैं। सांस्कृतिक संवेदनशीलता के साथ, स्वास्थ्य सेवाओं का वितरण ज़रूरी है।

ग्वालखार की एक अन्य स्वास्थ्य सहिया, जसिंता कोरवाइन ने बताया कि स्वास्थ्य केंद्र के ब्लड प्रेशर, शुगर और ब्लड टेस्ट करने वाले उपकरण चार साल से खराब पड़े हैं। जसिंता ने कहा, "नए उपकरण खरीदने के लिए राज्य सरकार ने अक्टूबर 2024 में धनराशि स्वीकृत की थी, लेकिन केवाईसी नहीं होने के कारण इसे अभी तक खरीदा नहीं जा सका है।" लाल फ़ीताशाही और भ्रष्टाचार, विकास की राह में एक बड़ी बाधा हैं।

प्रसवपूर्व जाँच गर्भावस्था के दौरान कम से कम तीन बार होनी चाहिए, जो उपकरणों और सुविधाओं की कमी के चलते सिर्फ़ एक या दो बार ही हो पाती है। जसिंता कहती हैं कि पर्याप्त संसाधनों के अभाव में, स्वास्थ्य कर्मियों को भी अपने काम को सही ढंग से करने में मुश्किल होती है।

लातेहार के सिविल सर्जन, अवधेश सिंह कहते हैं, "मशीनें स्वास्थ्यकर्मियों (सहिया) के पास नहीं रखी जाती हैं। उन्हें आंगनबाड़ी केंद्रों में रखा जाता है और स्वास्थ्यकर्मी वहीं से उनका इस्तेमाल करते हैं। खराब मशीनों को बदलने के लिए कोई निश्चित समय-सीमा नहीं है।" जवाबदेही और जवाबदेही का अभाव, स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता को प्रभावित करता है।

जसिंता आगे बताती हैं, "हमें तो साफ़ पानी भी नसीब नहीं होता है। हम चुआं (पहाड़ी नदियों के गड्ढों में जमा पानी) से पीते हैं। साफ़ पानी की कमी और भी कई तरह की बीमारियों को लेकर आती है।" स्वच्छ पानी की कमी, आदिवासी समुदाय के स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाला एक और महत्वपूर्ण कारक है।

झारखंड और भारत भर के अन्य आदिवासी क्षेत्रों में लगभग यही स्थिति है, जहाँ पानी की गुणवत्ता खराब है और स्वास्थ्य सेवाएँ दुर्लभ हैं।

झारखंड वन अधिकार मंच के सुधीर पाल, एक संभावित कानूनी उपायों पर बात करते हैं। वे कहते हैं, सामुदायिक वन अधिकार (सीएफआर) समझौते की धारा 3-2 के तहत, अगर ग्राम सभा मंजूरी दे, तो सामुदायिक विकास के लिए 1 हेक्टेयर तक की वन भूमि आवंटित की जा सकती है, जिसमें सड़कें, स्वास्थ्य केंद्र और पानी के साथ-साथ दूरसंचार सुविधाओं के लिए ज़मीन का इस्तेमाल किया जा सकता है। इस अधिनियम के तहत प्रति हेक्टेयर 75 पेड़ काटे जा सकते हैं।

मोनोपल्ली का मानना है कि इसका समाधान एक स्पष्ट और

कारगर योजना में छिपा है। उन्होंने कहा, "राज्य सरकार को सड़कों की ज़रूरत वाले क्षेत्रों की एक सूची तैयार की जानी चाहिए, उनकी दूरी मापनी चाहिए और अनुमति के लिए केंद्रीय वन मंत्रालय से संपर्क करना चाहिए।"

झारखंड के पूर्व प्रधान मुख्य वन संरक्षक (पीसीसीएफ), लाल रत्नाकर सिंह के अनुसार, "यह सही है कि वन अधिकार अधिनियम 2006 के तहत प्रति हेक्टेयर 75 पेड़ों की कटाई की अनुमति है। लेकिन इसके बावजूद जंगल के उन इलाकों में सड़कें बनाई गई हैं, जहाँ बहुत कम लोग रहते हैं।"

सिंह कहते हैं, "अगर सरकार और वन विभाग चाहें तो जंगल में कहीं भी ऑल वेदर रोड (बारहमासी सड़कें) बनाई जा सकती हैं। चूँकि ऐसी जगहों पर गाँव दूर-दूर पर हैं, वहाँ बहुत कम लोग रहते हैं, इसलिए सरकार उन पर ध्यान नहीं देती। यहाँ रहने वाले लोग अपनी समस्याएँ भी ठीक से उन तक नहीं पहुँचा पाते हैं।"

करीब चार घंटे पैदल चलने के बाद, सुखदेव, गाँव वाले और स्वास्थ्यकर्मी नज़दीकी सड़क पर पहुँचे, जहाँ एक एम्बुलेंस अमरमुनि का इंतज़ार कर रही थी।

जन स्वास्थ्य अभियान के ग्लोबल कोऑर्डिनेटर, त्यागराजन सुंदररामन का कहना है कि अगर लोगों को अस्पताल जाने के लिए चार घंटे पैदल चलना पड़े, तो यह बहुत बड़ी नाकामी है।

केंद्र और राज्य सरकारों दोनों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि हर व्यक्ति के गाँव से एक किलोमीटर के अंदर सड़क हो, जो पूरे साल खुली रहे। 2011-12 में झारखंड के दूरदराज इलाकों का नक्शा बनाया गया था, ताकि गर्भवती महिलाओं के लिए अस्पताल एक घंटे के भीतर पहुँच में हों। लेकिन पैसे की कमी और सरकार की लापरवाही के कारण इस पर काम में देरी हुई है।

आदिवासी समुदाय के सामने, आज भी कई चुनौतियाँ खड़ी हैं। गरीबी, अशिक्षा, कुपोषण, स्वास्थ्य सेवाओं की कमी और सरकारी उदासीनता, उनकी ज़िंदगी को मुश्किल बना रही हैं।

झारखंड में आदिवासी समुदाय की दुर्दशा, एक ऐसी कहानी है, जो हमें विकास के दावों पर सवाल उठाने को मजबूर करती है। यह एक ऐसी कहानी है, जो हमें याद दिलाती है कि विकास सिर्फ़ ऊँची इमारतों और चमकती सड़कों का नाम नहीं है, बल्कि हर नागरिक के जीवन स्तर को सुधारने का नाम है।

अमरमुनि नागेसिया, उस दिन अस्पताल पहुँच तो गईं, लेकिन उनकी कहानी यहीं खत्म नहीं होती है। उनकी तरह, हजारों आदिवासी महिलाएँ आज भी एक बेहतर कल की आस में जी रही हैं। उनकी उम्मीदों को साकार करने के लिए, हमें मिलकर काम करना होगा। हमें उनकी आवाज़ बनना होगा, और सरकार को उनकी समस्याओं के समाधान के लिए मजबूर करना होगा।

आज, जब हम विकास के नए आयामों की बात करते हैं, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे समाज का एक बड़ा हिस्सा आज भी बुनियादी सुविधाओं से वंचित है। हमें यह याद रखना होगा कि सच्चा विकास वही है, जो हर नागरिक को साथ लेकर चले, जो किसी को भी पीछे न छोड़े। क्या हम आदिवासी समुदाय के लिए एक बेहतर भविष्य का निर्माण कर पाएँगे? क्या हम खाट की बैसाखी को हटाकर, उन्हें आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं का लाभ दिला पाएँगे? यह सवाल, आज हर उस व्यक्ति से है, जो एक न्यायपूर्ण और समावेशी समाज का सपना देखता है।

अमरमुनि की तरह, आज भी हजारों आदिवासी महिलाएँ एक बेहतर कल की आस में जी रही हैं। उनकी उम्मीदों को साकार करने के लिए, हमें मिलकर काम करना होगा। हमें उनकी आवाज़ बनना होगा, और सरकार को उनकी समस्याओं के समाधान के लिए मजबूर करना होगा। तभी हम सच्चे अर्थों में एक विकसित और न्यायपूर्ण समाज का निर्माण कर पाएँगे।

बलूचिस्तान, जो कभी ब्रिटिश शासन से स्वतंत्र होकर फला-फूला, जल्द ही पाकिस्तान के क्रूर कब्जे का शिकार हो गया। 1948 में जबरन विलय के बाद से, बलोच लोग अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे हैं। पाकिस्तान की सरकार ने इस क्षेत्र का शोषण किया है, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया है, और स्थानीय आबादी को बुनियादी अधिकारों से वंचित रखा है। बलूचिस्तान की संपदा का उपयोग पाकिस्तान के अन्य प्रांतों को समृद्ध करने के लिए किया जाता है, जबकि बलोच गांवों में अंधेरा रहता है। प्रतिरोध को दबाने के लिए सेना ने अत्याचार किए हैं, मानवाधिकारों का उल्लंघन किया है, और असंतुष्टों को गायब कर दिया है। बलोच स्वतंत्रता का संघर्ष अब एक ज्वालामुखी बन गया है, जो कभी भी फट सकता है, जो एक स्वतंत्र राष्ट्र की आकांक्षा का प्रतीक है...

कल्ट करंट टीम ने यह कवर स्टोरी **संजय श्रीवास्तव, श्रीराजेश, संदीप कुमार** और **मनोज कुमार** की बहुमूल्य अंतर्दृष्टि और विशेषज्ञता से तैयार की है।

सिर्फ एक ट्रेन नहीं 77 वर्षों से बंधक है बलूचिस्तान!

एक गंभीर प्रश्न विश्व पटल पर फिर से उभर रहा है, जो भले ही नया न हो, पर 11 मार्च 2025 की घटना के बाद और भी महत्वपूर्ण हो गया हैः क्या कोई सेना, जिसके पास एक राष्ट्र है, अब उस राष्ट्र की एकता और अखंडता को ही खंडित करने पर तुली हुई है? विडंबना यह है कि यही सेना अतीत में भी अपने राष्ट्र को विभाजित कर चुकी है। 1971 में, उसने ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कीं कि पाकिस्तान टूट गया, और पूर्वी पाकिस्तान 'बांग्लादेश' के रूप में एक नए राष्ट्र के रूप में अस्तित्व में आया।

इतिहास एक बार फिर खुद को दोहराता हुआ प्रतीत हो रहा है। 11 मार्च की घटना ने विश्व का ध्यान उस भूभाग की ओर आकर्षित किया, जो 77 वर्ष पूर्व, 11 अगस्त 1947 को अंग्रेजों से स्वतंत्र हुआ था, और उसके चार दिन बाद अस्तित्व में आया था- पाकिस्तान। परंतु दुर्भाग्यवश, मात्र सात महीने सोलह दिन बाद, 27 मार्च 1948 को उस पर कब्जा कर लिया गया। हम बात कर रहे हैं बलूचिस्तान की, जिसे पाकिस्तान ने पिछले 77 वर्षों से बंधक बना रखा है।

पाकिस्तान की बेचैनी तब खुलकर सामने आई, जब बलूचिस्तान की आजादी के लिए संघर्ष कर रहे सशस्त्र समूह, बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी (बीएलए) ने जाफर एक्सप्रेस ट्रेन को हाईजैक कर लिया। पाकिस्तानी सेना ने, हमेशा की तरह, अपने दावे पेश किए, जो अक्सर अविश्वसनीय लगते हैं। सेना ने दावा किया कि बचाव अभियान में 31 लोग मारे गए, जिनमें 23 पाकिस्तानी सैनिक, 3 रेलवे कर्मचारी और 5 निर्दोष यात्री शामिल थे। उन्होंने यह भी दावा किया कि मौके पर 33 बीएलए लड़ाकों को मार गिराया गया। वहीं, ट्रेन हाईजैक के दौरान 214 सेना के जवानों को अपने साथ पहाड़ों में ले जाने वाले बीएलए ने उन्हें मार देने की जिम्मेदारी ली।

सत्य क्या है और झूठ क्या, यह मीडिया में आई खबरों से ही स्पष्ट हो जाता है। इस घटना के बाद, सेना और पाकिस्तान सरकार ने घोषणा की कि वे इन सशस्त्र गुटों से कोई बात नहीं करेंगे, बल्कि बलूचिस्तान आंदोलन को शांतिपूर्वक संचालित करने वाले लोगों से संवाद कर मामले का शांतिपूर्ण समाधान निकालेंगे।

हालांकि, बलूचिस्तान आंदोलन में महरंग बलोच एक प्रमुख चेहरा बनकर उभरी हैं। मार्च के तीसरे सप्ताह के अंत में, उनके नेतृत्व में एक शांतिपूर्ण प्रदर्शन हो रहा था, तभी पाकिस्तानी पुलिस (जिसके पीछे सेना का हाथ बताया जाता है) ने न केवल लाठीचार्ज किया, बल्कि गोलियां भी चलाईं। इस घटना में तीन लोग मारे गए, जिनमें एक 12 वर्षीय नाबालिग भी शामिल था। महरंग बलोच को गिरफ्तार कर लिया गया और जेल भेज दिया गया। यह घटनाक्रम बलूचिस्तान में जारी संघर्ष की जटिलताओं और मानवीय त्रासदी को दर्शाता है, और सवाल उठाता है कि क्या शांतिपूर्ण विरोध को दबाकर समस्या का समाधान किया जा सकता है।

1971 के हालात से समानताएं स्पष्ट हैं। जिस प्रकार टिक्का खान ने बंगालियों का दमन किया, उसी प्रकार आज सेना प्रमुख आसिम मुनीर की सरपरस्ती में बलूचों का दमन किया जा रहा है। हालांकि, अकेले आसिम मुनीर को ही दोषी ठहराना उचित नहीं है। पाकिस्तान सेना ने आरंभ से ही बलूचों का दमन किया है।

पिछले कुछ दशकों में बलूचिस्तान में बलोच राष्ट्रवाद का उदय हुआ है। बलोच लोगों ने अपनी आजादी और अधिकारों के लिए संगठित रूप से संघर्ष करना शुरू कर दिया है। बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी (बीएलए) और बलूचिस्तान रिपब्लिकन आर्मी (बीआरए) जैसे संगठन सशस्त्र विद्रोह का नेतृत्व कर रहे हैं। अब तो बलूचिस्तान, सिंध और खैबर पख्तूनख्वा के कई सशस्त्र गुटों ने मिलकर "ब्रास" नामक एक संगठन बना लिया है। उनका मुख्य उद्देश्य बलूचिस्तान को एक स्वतंत्र राष्ट्र बनाना है, जो पाकिस्तान की दमनकारी नीतियों से मुक्त हो।

जाफर एक्सप्रेस का अपहरण इसी संघर्ष का एक हिस्सा है। यह घटना प्रतीकात्मक है, जो यह दर्शाती है कि बलूचिस्तान को जबरन कब्जे में रखा गया है और वहां के लोग 77 वर्षों से बंधक बने हुए हैं। विद्रोही संगठनों का कहना है कि पाकिस्तान की सरकार ने बलूचिस्तान की स्वायत्तता को समाप्त कर दिया है और वहां के लोगों को उनके प्राकृतिक अधिकारों से वंचित कर रखा है।

पाकिस्तान की सरकार ने बलूचिस्तान में राजनीतिक गतिविधियों को कुचलने का हर संभव प्रयास किया है। बलूचिस्तान के नेताओं को अक्सर गिरफ्तार किया जाता है, और कई बार उन्हें 'लापता' कर दिया जाता है। बलूचिस्तान के प्रमुख राजनीतिक दलों को चुनाव में भाग लेने से रोका जाता है, और सेना बलूचिस्तान की राजनीतिक गतिविधियों पर पूरी तरह से नियंत्रण रखती है। "गायब" किए गए लोगों की कहानियां बलूचिस्तान में आम हैं, जो पाकिस्तानी सेना के अत्याचारों की गवाही देती हैं।

बलोच नेताओं का कहना है कि पाकिस्तान सरकार ने बलूचिस्तान को सिर्फ एक संसाधन स्रोत के रूप में देखा है और वहां के लोगों की भलाई के लिए कोई कदम नहीं उठाए हैं। कई बार बलूचिस्तान में राजनीतिक गतिविधियों को दबाने के लिए सेना और सरकार ने मिलकर कड़े कानून बनाए हैं, जिनसे स्थानीय जनता का दमन होता है।

बलूचिस्तान का संघर्ष न सिर्फ पाकिस्तान के लिए एक चुनौती है, बल्कि यह पूरे दक्षिण एशिया की स्थिरता के लिए भी एक महत्वपूर्ण मुद्दा बन चुका है। बलूचिस्तान की जनता आजादी के लिए लड़ रही है, और इस संघर्ष ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी ध्यान आकर्षित किया है।

पाकिस्तान सरकार को बलूचिस्तान की समस्याओं का समाधान निकालना होगा। वहां की जनता को उनके बुनियादी अधिकार देने होंगे। बलूचिस्तान की जनता को शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं और रोजगार के अवसरों का लाभ मिलना चाहिए। यदि पाकिस्तान सरकार बलूचिस्तान के प्रति अपनी नीति में बदलाव नहीं करती, तो

यह संघर्ष और भी विकराल रूप ले सकता है।

बलूचिस्तान का संघर्ष 77 वर्षों से चल रहा है, और यह संघर्ष केवल एक राजनीतिक मुद्दा नहीं है, बल्कि यह बलोच लोगों के अस्तित्व, उनकी पहचान और उनके अधिकारों का प्रश्न है। जाफर एक्सप्रेस का अपहरण इस बात का प्रतीक है कि बलूचिस्तान अब और भीषण संघर्ष के लिए तैयार है। बलोच लोगों की मांगें जायज हैं, और उन्हें उनका हक मिलना चाहिए।

बलूचिस्तान के दर्द की दास्तां को समझने के लिए, हमें अतीत में जाकर उन घटनाओं से गुजरना होगा, जिन्होंने बलूचिस्तान को आज इस स्थिति में ला खड़ा किया है। यह संघर्ष केवल वर्तमान का परिणाम नहीं है, बल्कि दशकों के अन्याय और उपेक्षा का परिणाम है।

ब्रिटिश शासन से मुक्ति के बाद, बलूचिस्तान ने एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में अपनी पहचान बनाई थी। बलोच लोग अपनी विशिष्ट संस्कृति, भाषा और समृद्ध परंपराओं पर गर्व करते थे। जब पाकिस्तान अस्तित्व में आया, तो बलूचिस्तान ने अपनी संप्रभुता बनाए रखने की इच्छा व्यक्त की। दुर्भाग्यवश, यह स्वतंत्रता मात्र सात महीने और सोलह दिनों तक ही टिक पाई। पाकिस्तानी सेना ने बलूचिस्तान पर आक्रमण किया और उसे जबरन पाकिस्तान में शामिल कर लिया। तब से लेकर आज तक, बलूचिस्तान अपनी खोई हुई स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहा है।

क्षेत्रफल की दृष्टि से, बलूचिस्तान पाकिस्तान का सबसे बड़ा प्रांत है, जो पाकिस्तानी क्षेत्र का 44% हिस्सा कवर करता है। हालांकि, इसकी आबादी अपेक्षाकृत कम है, लगभग 1.5 करोड़। बलूचिस्तान की सीमाएं समुद्र, ईरान और अफगानिस्तान से मिलती हैं। यह एक ऐसा क्षेत्र है जो सदियों से संघर्ष, प्रतिरोध और स्वतंत्रता की अटूट भावना का प्रतीक रहा है।

आज जो बलूचिस्तान खंडहरों सा दिखता है, कभी वहां संपन्नता की पराकाष्ठा थी। इतिहास के पन्नों में दबी यह भूमि उन प्राचीन सभ्यताओं की गवाह है, जिन्होंने मानव इतिहास को आकार दिया। विश्व में खेती करने के सबसे पुराने साक्ष्य इसी क्षेत्र में पाए गए हैं, जो इस बात का प्रमाण है कि यहाँ कभी जीवन और समृद्धि का अथाह सागर लहराता था।

बलूचिस्तान के बालाकोट के पास, मेहरगढ़ क्षेत्र में हुए उत्खनन ने हड़प्पा से भी पुरानी सभ्यता के अवशेषों को उजागर किया है। इसने साबित कर दिया कि बोलन नदी के किनारे हजारों साल पहले एक विकसित सभ्यता की बसावट थी, जो अपनी वास्तुकला,

बलूचिस्तान में सेना का उत्पीड़न और सशस्त्र विद्रोह की प्रतिक्रिया

बलूचिस्तान में पाकिस्तानी सेना का उत्पीड़न और सशस्त्र विद्रोह एक गंभीर मामला है, जो पाकिस्तानी सेना के दमनकारी कृत्यों से उत्पन्न हुआ है। बलूचिस्तान, प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध होने के बावजूद, दशकों से राज्य के उत्पीड़न का सामना कर रहा है। पाकिस्तान की सेना ने बलूचिस्तान पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए अत्यधिक क्रूर और कठोर नीतियां अपनाई हैं, जिसके परिणामस्वरूप वहां के लोगों में असंतोष और विद्रोह पनपा है।

- **बलपूर्वक विलय और राजनीतिक उपेक्षा:** बलूचिस्तान का पाकिस्तान में बलपूर्वक विलय वर्ष 1948 में हुआ। बलोच लोगों को उनके राजनीतिक अधिकारों से वंचित किया गया, और स्वायत्तता की मांग को कभी गंभीरता से नहीं लिया गया।
- **संसाधनों का शोषण और आर्थिक उपेक्षा:** बलूचिस्तान में प्राकृतिक संसाधनों के विशाल भंडार हैं, लेकिन इन संसाधनों का शोषण पाकिस्तानी सेना और केंद्र सरकार द्वारा किया जाता रहा है, जबकि बलूचिस्तान के लोगों को उनसे कोई लाभ नहीं मिला है।
- **सेना द्वारा मानवाधिकारों का उल्लंघन:** पाकिस्तानी

सेना ने बलूचिस्तान में मानवाधिकारों का गंभीर उल्लंघन किया है, जिसमें हजारों लोगों की हत्या कर दी गई है और कई अन्य लापता कर दिए गए हैं।

- **बलोच नेताओं की हत्या:** सेना द्वारा बलूचिस्तान में कई प्रमुख बलोच नेताओं की हत्या की गई है, जिसने विद्रोह को और तीव्र कर दिया है।
- **नागरिक विद्रोह पर निर्मम कार्रवाई:** पाकिस्तान की सेना ने न केवल सशस्त्र विद्रोहियों पर कार्रवाई की है, बल्कि नागरिक प्रतिरोध और प्रदर्शनों को भी क्रूरतापूर्वक दबाया है।
- **चीनी परियोजनाओं का सैन्यीकरण:** चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (CPEC) बलूचिस्तान के लिए एक प्रमुख मुद्दा बना हुआ है। सेना ने CPEC के तहत ग्वादर बंदरगाह के विकास के नाम पर बलूचिस्तान के क्षेत्रों का बड़े पैमाने पर सैन्यीकरण कर दिया है, जिसने असंतोष और विद्रोह की भावना को और बढ़ा दिया है।

पाकिस्तानी सेना द्वारा किए गए इन उत्पीड़नकारी कृत्यों के परिणामस्वरूप, बलूचिस्तान में सशस्त्र विद्रोह शुरू हो गया है। बलोच राष्ट्रवादी और स्वतंत्रता संगठनों ने इस उत्पीड़न के विरुद्ध संघर्ष शुरू कर दिया है, जिसमें बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी (BLA), बलूचिस्तान रिपब्लिकन आर्मी (BRA), और बलूचिस्तान लिबरेशन फ्रंट (BLF) जैसे संगठनों ने सशस्त्र संघर्ष का नेतृत्व संभाला है।

संस्कृति और जीवनशैली में बेजोड़ थी।

लेकिन यह समृद्धि हमेशा के लिए नहीं थी। इतिहास के क्रूर हाथों ने बलूचिस्तान की किस्मत को बदल दिया। 711 ईस्वी में, जब मुहम्मद-बिन-कासिम ने इस क्षेत्र पर आक्रमण करना शुरू किया, तो हिंदू-बौद्ध संस्कृति से समृद्ध यह इलाका धीरे-धीरे इस्लामी प्रभाव में आ गया। सदियों तक, बलूचिस्तान विदेशी शासकों के अधीन रहा, जिसकी संस्कृति और पहचान समय के साथ बदलती रही।

अकबर के शासनकाल में, बलूचिस्तान मुगल साम्राज्य का हिस्सा बन गया। लेकिन 1637 में, मुगलों ने इस क्षेत्र को फारस (ईरान) को सौंप दिया। बाद में, 1747 में, कलात के मीर नासिर खान ने अफगान शासन को स्वीकार कर लिया। बलूचिस्तान, एक शतरंज की बिसात की तरह, साम्राज्यों के बीच अपनी पहचान के लिए संघर्ष करता रहा।

यह एक दिलचस्प विरोधाभास है कि रहमत अली ने पाकिस्तान की कल्पना करते हुए, इस मुस्लिम राष्ट्र के नाम में जो 'स्तान' जोड़ा, उसकी प्रेरणा बलूचिस्तान से ही मिली थी। लेकिन विडंबना यह है कि जिस दिन पाकिस्तान स्वतंत्र हुआ, उस दिन उसके नक्शे में बलूचिस्तान का कोई जिक्र नहीं था। इसकी कल्पना भी नहीं की गई थी, और प्रस्तावित नाम में भी इसका उल्लेख नहीं था। बलूचिस्तान तो पाकिस्तान को आज़ादी मिलने से तीन दिन पहले ही, 11 अगस्त 1947 को आज़ाद हो गया था।

कलात... बलूचिस्तान के प्रमुख शहरों में से एक, क्वेटा से केवल नब्बे मील की दूरी पर स्थित एक घनी आबादी वाला शहर है। मजबूत दीवारों के भीतर बसे इस शहर का इतिहास दो-ढाई हजार वर्ष पुराना है। कुजदर, गंदावा, नुश्की और क्वेटा जैसे शहरों में जाने के लिए कलात शहर को पार करना पड़ता था, इसलिए इस शहर का एक विशिष्ट सामरिक महत्व था। यह बलूचिस्तान के हृदयस्थल में बसा एक ऐसा शहर है, जो सदियों से इस क्षेत्र के इतिहास और संस्कृति का केंद्र रहा है।

कलात शहर, जिसकी विशाल दीवारों के मध्य एक भव्य हवेली स्थित थी, बलूचिस्तान की राजनीति का केंद्र था। इस हवेली में खानों का "राजभवन" स्थित था, जहाँ 11 अगस्त 1947 को मुस्लिम लीग, ब्रिटिश सरकार के रेजिडेंट और कलात के मीर अहमद यार खान के बीच एक महत्वपूर्ण संधि पर हस्ताक्षर हुए। इस संधि के परिणामस्वरूप, कलात एक स्वतंत्र देश के रूप में अस्तित्व में आया।

कलात के साथ ही, मीर अहमद यार खान का वर्चस्व लास बेला,

मकरान और खारान जैसे पड़ोसी क्षेत्रों पर भी था। इसलिए, भारत की स्वतंत्रता और पाकिस्तान के निर्माण से पहले ही, इन सभी भागों को मिलाकर, मीर अहमद यार खान के नेतृत्व में एक बलूचिस्तान राष्ट्र का निर्माण हो गया।

बलूचिस्तान के बलोच लोगों ने न तो पहले कभी पाकिस्तान में शामिल होने के बारे में सोचा था, न ही आज उनकी वैसी मानसिकता है। बलूचिस्तान स्वतंत्र देश बनना चाहता था, और वह बना भी। यह एक ऐसा सपना था जो सदियों से उनके दिलों में बसा था।

लेकिन बलूचिस्तान की यह स्वतंत्रता पाकिस्तान को रास नहीं आई। आखिरकार, कलात की स्वतंत्रता के सात महीने और सोलह दिन बाद, 27 मार्च 1948 को पाकिस्तानी सेना के मेजर जनरल अकबर खान ने इस छोटे से देश पर बलात कब्जा कर लिया। पिछले साढ़े सात महीनों में, यह छोटा सा देश अपनी सेना की जमावट भी ठीक से नहीं कर सका था। इसलिए प्रतिरोध ज्यादा प्रभावी नहीं हो पाया, और पाकिस्तान ने सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण और प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर इस प्रदेश को अपने कब्जे में ले लिया।

मार्च 1948 में बलूचिस्तान पर पाकिस्तान का कब्जा होते ही विरोध के स्वर बुलंद होने लगे। कलात के अहमद यार खान ने तो पाकिस्तानी कब्जे का ज्यादा विरोध नहीं किया, परंतु उनके भाई राजकुमार अब्दुल करीम ने जुलाई 1948 में पाकिस्तान के इस जबरन कब्जे के विरोध में विद्रोह कर दिया। अपने अनुयायियों के साथ वह अफगानिस्तान चले गए। तत्कालीन अफगान सरकार बलूचिस्तान को पाकिस्तान से अलग करके उसे अपने कब्जे में लेना चाहती थी, क्योंकि उन्हें समुद्री बंदरगाह (सी पोर्ट) नहीं मिला था और बलूचिस्तान के पास समंदर था।

लेकिन राजकुमार अब्दुल करीम को अफगान सरकार से अपेक्षित समर्थन नहीं मिल पाया। अंततः लगभग एक वर्ष के बाद, राजकुमार करीम ने पाकिस्तानी सरकार के सामने आत्मसमर्पण कर दिया। यह बलूचिस्तान की स्वतंत्रता के लिए एक बड़ा झटका था।

बलूचिस्तान के स्वतंत्रता आंदोलन में एक जबरदस्त नाम उभरा - नवाब नौरोज़ खान। जब कलात रियासत को समाप्त कर उसका पूर्णतः पाकिस्तान में "वन यूनिट" पॉलिसी के अंतर्गत विलय किया गया, तो नवाब नौरोज़ खान ने पाकिस्तान का कड़ा विरोध किया। उन्होंने पाकिस्तानी सरकार के विरोध में गुरिल्ला युद्ध छेड़ दिया। वे नहीं चाहते थे कि अन्य राज्यों की तरह बलूचिस्तान पर भी पाकिस्तान का नियंत्रण हो। नवाब नौरोज़ खान बलूचिस्तान की स्वतंत्रता के प्रतीक बन गए, और उनके संघर्ष ने आने वाली पीढ़ियों को प्रेरित किया।

लेकिन कुछ ही महीनों बाद, 15 मई 1951 को, नवाब नौरोज़ खान को पाकिस्तानी सरकार के सामने आत्मसमर्पण करने के लिए मजबूर होना पड़ा। पाकिस्तानी सरकार ने उन्हें और उनके सभी साथियों को माफी का आश्वासन दिया था। लेकिन अपनी फितरत के मुताबिक, पाकिस्तान सरकार ने अपना ही वचन तोड़ दिया। नवाब के रिश्तेदारों और 150 वफादार सैनिकों को देशद्रोह के आरोप में गिरफ्तार किया गया। अंततः 15 जुलाई को इस विद्रोह के पांच नेताओं को फांसी पर लटकाकर मार डाला गया। नवाब नौरोज़ खान उम्रदराज हो चुके थे, इसलिए उन्हें बख्श दिया गया। लेकिन पांच साल बाद, नवाब साहब कोहलू की जेल में ही चल बसे। उनकी मृत्यु के साथ, बलूचिस्तान की स्वतंत्रता की एक और लौ बुझ गई।

पाकिस्तान सरकार को लगा कि इस विद्रोह की चिंगारी भी इसी के साथ समाप्त हो जाएगी। लेकिन उनकी यह सोच गलत साबित हुई। बलूचिस्तान के लोगों के दिलों में स्वतंत्रता की ज्वाला धधकती रही।

पाकिस्तानी सेना ने बलूचिस्तान की स्थिति का आकलन करते हुए, वहां संवेदनशील इलाकों में सैनिक अड्डे तैयार करवाने का

काम शुरू किया। इस कार्रवाई से स्वतंत्र बलूचिस्तान के समर्थक खौल उठे। उनके नेता शेर मोहम्मद बिजरानी ने 72,000 किलोमीटर के क्षेत्र में अपने गुरिल्ला लड़ाकों के अड्डे खड़े किए। बलूचिस्तान में गैस के अनेक भंडार हैं, और ये विद्रोही नेता चाहते थे कि पाकिस्तान सरकार इन गैस भंडारों से मिलने वाली कुछ आमदनी कबीलाई नेताओं के साथ भी साझा करे। यह लड़ाई छह साल चली, लेकिन अंत में बलूचिस्तान की स्वतंत्रता चाहने वाले विद्रोही सैनिक थक गए, और राष्ट्रपति याह्या खान के साथ युद्धविराम के लिए राजी हो गए। शांति की यह झलक क्षणिक थी, क्योंकि संघर्ष के बीज अभी भी जमीन में दबे हुए थे।

1970 के इन चुनावों में, जहां पूर्व पाकिस्तान में शेख मुजीबुर रहमान की अवामी लीग प्रचंड बहुमत से विजयी रही, वहीं पश्चिमी पाकिस्तान में जुल्फिकार भुट्टो की पीपीपी लगभग सभी प्रांतों में जीत हासिल करने में सफल रही – सिवाय बलूचिस्तान और नॉर्थ वेस्ट फ्रंटियर प्रोविन्स के। बलूचिस्तान में नेशनल अवामी पार्टी जीती, जो स्वतंत्रतावादी बलूचों की पार्टी थी। राष्ट्रीय असेंबली की 300 में से शेख मुजीबुर रहमान की अवामी लीग ने 167 सीटें जीतीं, जबकि भुट्टो की पार्टी को मात्र 71 सीटें मिलीं।

बलूचिस्तान

लहू से लिखी आज़ादी की दास्तान

बलूचिस्तान, पाकिस्तान का सबसे बड़ा और सबसे पश्चिमी प्रांत, सदियों से एक ऐसी भूमि रहा है जो अपने अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए लड़ रही है। यह क्रोनोलॉजी उस अनवरत संघर्ष की कहानी कहती है, एक ऐसी कहानी जो साहस, बलिदान और अटूट इच्छाशक्ति से बुनी गई है:

1947 - एक राष्ट्र का जन्म, एक उम्मीद का अंत:

ब्रिटिश भारत से पाकिस्तान का गठन हुआ, जिसने उपमहाद्वीप के नक्शे को बदल दिया। बलूचिस्तान, विशेष रूप से खान ऑफ कलात (बलूचिस्तान का प्रमुख राज्य), ने इस नए राष्ट्र में शामिल होने से इनकार करते हुए, स्वतंत्र रहने की इच्छा जताई। यह एक ऐसा पल था, जब बलूच लोगों ने अपने भविष्य को खुद तय करने का सपना देखा था।

11 अगस्त 1947 - स्वतंत्रता का एक झंडा:

ब्रिटिश साम्राज्य ने बलूचिस्तान के कलात राज्य को एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में मान्यता दी। कलात एक संप्रभु राज्य बना और यह बलूचिस्तान की स्वायत्तता का प्रतीक था। यह एक ऐसा दिन था, जब आजादी की किरण बलूचिस्तान पर चमकी।

27 मार्च 1948 - बलपूर्वक विलय, विद्रोह की शुरुआत:

स्वतंत्रता का यह सपना जल्द ही चकनाचूर हो गया। पाकिस्तान की सेना ने कलात पर आक्रमण किया और उसे जबरन पाकिस्तान में मिला लिया। इस विलय के बाद बलूच नेताओं ने विद्रोह शुरू किया, क्योंकि वे इसे बलूचिस्तान की स्वतंत्रता का हनन मानते थे। यह एक ऐसा जख्म था, जो आज भी हरा है।

1958-1959 - विद्रोह की चिंगारी:

बलूचिस्तान में विद्रोह का दूसरा चरण शुरू हुआ, जब खान ऑफ कलात ने पाकिस्तान के खिलाफ विद्रोह किया। यह एक ऐसा साहस था, जिसकी कीमत खान को चुकानी पड़ी। पाकिस्तान की सेना ने इस विद्रोह को बर्बरता से कुचल दिया और खान ऑफ कलात को गिरफ्तार कर लिया गया।

1971 पाकिस्तान के इतिहास का एक अत्यंत अशांत वर्ष था। इस वर्ष के अंत तक, पाकिस्तान दो भागों में विभाजित हो गया, और 'बांग्लादेश' के रूप में एक नए राष्ट्र का उदय हुआ, जो पहले 'पूर्वी पाकिस्तान' के नाम से जाना जाता था। पाकिस्तान के टूटने की त्रासदी ने बलूचिस्तान के लोगों के दिलों में स्वतंत्रता की उम्मीद को और भी प्रबल कर दिया।

बचे हुए पाकिस्तान में, जनरल याह्या खान को बलूचिस्तान में 'नेशनल अवामी पार्टी' की जीत नागवार गुजरी। उन्हें यह आशंका थी कि बलोच लोग, ईरान के साथ मिलकर एक बड़ा संघर्ष खड़ा करने वाले हैं।

बांग्लादेश की गलती से सबक न लेते हुए, पाकिस्तान ने बलूचिस्तान में भी वही क्रूर रणनीति अपनाई – भीषण अत्याचार! बलूचिस्तान की ओर जाने वाले सभी रास्ते बंद कर दिए गए। बलूचिस्तान के कुछ क्षेत्रों में, जहां पाकिस्तानी सेना को बलोच विद्रोहियों के अड्डे होने का संदेह था, हवाई हमले भी किए गए। अनेक स्थानों पर बलोच विद्रोही और पाकिस्तानी सेना के बीच भीषण संघर्ष हुआ। हजारों की संख्या में दोनों तरफ के लोग मारे गए। अनेक विद्रोही बलोच नेता अफगानिस्तान पहुंचने में सफल रहे।

इस भयानक अत्याचार, दमन और संघर्ष के बाद, बलोच स्वतंत्रता आंदोलन में एक क्षणिक ठहराव आया। लेकिन इस ठहराव ने एक नए रूप को जन्म दिया – संगठित सशस्त्र आंदोलन – बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी (बीएलए)। बीएलए का उदय बलूचिस्तान की स्वतंत्रता के लिए एक नए अध्याय की शुरुआत थी।

जनरल याह्या खान को यह आशंका थी कि बलोच लोग, ईरान के साथ मिलकर एक बड़ा संघर्ष खड़ा करने वाले हैं।

बलूचिस्तान के लोगों का मानना है कि पाकिस्तान सरकार ने उनके संसाधनों का शोषण किया है और उन्हें राजनीतिक और सामाजिक अधिकारों से वंचित रखा है। यह एक ऐसी शिकायत है जो दशकों से बलूचिस्तान के लोगों के दिलों में घर कर गई है।

बलूचिस्तान की संपदा का मुख्य उपयोग पाकिस्तान की सेना और सरकार ने किया है। यह क्षेत्र पाकिस्तान के सबसे बड़े प्रांतों में से एक है, और इसकी प्राकृतिक संपदा का पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण योगदान है। लेकिन इसका लाभ स्थानीय जनता को नहीं मिलता। यहां के लोग अभी भी बिजली, पानी, स्वास्थ्य सेवाओं और शिक्षा जैसी बुनियादी सुविधाओं से

वंचित हैं।

बलूचिस्तान की प्राकृतिक गैस का शोषण कर पाकिस्तान के अन्य प्रांतों को समृद्ध किया गया है, लेकिन बलूचिस्तान के गांवों और शहरों में अंधेरा छाया रहता है। वहां की जनता जब भी अपने अधिकारों के लिए आवाज उठाती है, उसे सेना के अत्याचारों का सामना करना पड़ता है।

बलूचिस्तान की वास्तविक समस्याओं को समझने और उनका समाधान निकालने के लिए जब तक पाकिस्तान की सरकार और सेना तैयार नहीं होती, तब तक बलूचिस्तान की जनता का संघर्ष जारी रहेगा। हालांकि वर्तमान कार्रवाइयां यही संकेत देती हैं कि सरकार क्या करेगी, जो सेना की कठपुतली है, और सेना का रवैया समस्या के समाधान की दिशा में बढ़ने के बजाय विपरीत दिशा की ओर अग्रसर है। महरंग बलोच की हालिया गिरफ्तारी इसका प्रमाण है। ऐसे में स्वयं सेना ही अपने मुल्क को फिर से तोड़ने की जमीन तैयार करती हुई दिखती है।

जाफर एक्सप्रेस, मात्र एक ट्रेन का अपहरण नहीं था, यह एक स्वतंत्र राष्ट्र की स्वतंत्रता की पुकार थी, जिसे सुनना और समझना अब आवश्यक हो गया है। बलूचिस्तान एक ज्वालामुखी है, जो कभी भी फट सकता है, और दुनिया को इसके परिणामों का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। यह एक चेतावनी है, और इस चेतावनी को अनदेखा करना भारी भूल साबित हो सकता है।

1962-1969 - तनाव और उत्पीड़न:

इस अवधि में बलूच नेताओं और पाकिस्तान सरकार के बीच लगातार तनाव रहा। बलूचिस्तान में विद्रोही गतिविधियाँ बढ़ीं, और पाकिस्तान सरकार ने कई बलूच नेताओं को गिरफ्तार किया। यह एक ऐसा दौर था, जब असहमति को कुचलने की हर कोशिश की गई।

1973-1977 - सबसे बड़ा विद्रोह, सबसे क्रूर दमन:

बलूचिस्तान में विद्रोह का सबसे बड़ा चरण 1973 में शुरू हुआ, जब पाकिस्तान के तत्कालीन प्रधानमंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो ने बलूचिस्तान की स्वायत्तता समाप्त कर दी और वहां के विधानसभा को भंग कर दिया। यह एक ऐसा कदम था, जिसने आग में घी डालने का काम किया। इस विद्रोह को कुचलने के लिए पाकिस्तान की सेना ने 80,000 से अधिक सैनिक तैनात किए। हजारों बलूच विद्रोही और नागरिक इस संघर्ष में मारे गए। यह एक ऐसा नरसंहार था, जिसे कभी नहीं भुलाया जा सकता।

2004-2006 - अखंड राष्ट्रवाद का उदय:

बलूचिस्तान में 2004 के बाद से विद्रोही गतिविधियों में तेजी आई। बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी (बीएलए) और अन्य संगठनों ने पाकिस्तान सरकार के खिलाफ हथियार उठा लिए। पाकिस्तान की सेना ने विद्रोहियों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई की, जिसमें अकीबर बुग्ती जैसे प्रमुख बलूच नेता मारे गए।

26 अगस्त 2006 - एक प्रतीक की हत्या:

बलूचिस्तान के वरिष्ठ नेता और बलूच राष्ट्रवाद के प्रतीक नवाब अकीबर बुग्ती को पाकिस्तानी सेना ने एक सैन्य कार्रवाई में मार दिया। उनकी हत्या ने बलूच राष्ट्रवादियों को और भड़का दिया और बलूचिस्तान में विद्रोह को नई दिशा दी। यह एक ऐसा बलिदान था, जिसने लोगों को और मजबूत कर दिया।

2009 - नेताओं की हत्या, आक्रोश की लहर:

तीन प्रमुख बलूच नेताओं - सुल्तान बलोच, गुलाम मोहम्मद बलोच और शेर मोहम्मद बलोच को पाकिस्तान की खुफिया एजेंसियों ने गिरफ्तार किया और बाद में उनकी हत्या कर दी गई। इन हत्याओं के बाद बलूचिस्तान में और अधिक अस्थिरता आई। यह एक ऐसा अत्याचार था, जिसे कभी माफ नहीं किया जा सकता।

2010-2013 - लापता लोग, मानवाधिकारों का हनन:

इस अवधि में पाकिस्तान की सेना और खुफिया एजेंसियों पर बलूच लोगों को 'लापता' करने के गंभीर आरोप लगे। हजारों बलूच कार्यकर्ताओं, छात्रों, और विद्रोहियों को लापता कर दिया गया। इसके

बलूचिस्तान: एक ख्वाब, हकीकत के करीब
अमूल्य धरोहर
अनिश्चितता से भरा भविष्य
तनावग्रस्त लोग
फूटता आक्रोश
केवल एक ही समाधान- आजादी
बलूचिस्तान
गरीबी
जंग-ए-आजादी
संसाधनों की लूट
अब बहुत हुआ!

बलूचिस्तान: भविष्य का आकलन

बलूचिस्तान के भविष्य का आकलन कई कारकों पर निर्भर करता है, जिनमें सेना का रवैया, पाकिस्तान की आंतरिक राजनीतिक स्थिति, अंतर्राष्ट्रीय भू-राजनीतिक परिस्थितियाँ, और बलूचिस्तान के भीतर सशस्त्र विद्रोह की दिशा शामिल हैं। इस विमर्श में, हम इन सभी पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करते हुए बलूचिस्तान के भविष्य का विश्लेषण करेंगे। बलूचिस्तान के भविष्य को देखते हुए, तीन संभावनाएँ उभरती हैं:

क्या स्वतंत्रता और स्वायत्तता का संघर्ष जारी रहेगा?

बलूचिस्तान में जारी सशस्त्र विद्रोह यह दर्शाता है कि वहां स्वतंत्रता की मांग कभी कम नहीं होगी। विद्रोही संगठन और बलोच जनता अपने संसाधनों और राजनीतिक अधिकारों के लिए संघर्ष जारी रखेंगे। यदि अंतर्राष्ट्रीय समर्थन मिलता है, तो बलूचिस्तान की स्वतंत्रता की दिशा में कदम उठाए जा सकते हैं।

पाकिस्तान द्वारा और अधिक उत्पीड़न

बलूचिस्तान में पाकिस्तानी सेना और सरकार द्वारा दमनकारी नीतियों का जारी रहना भी एक संभावना है। पाकिस्तान के लिए, बलूचिस्तान पर नियंत्रण बनाए रखना रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण है, खासकर CPEC (चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा) के संदर्भ में। यदि बलूचिस्तान में विद्रोह बढ़ता है, तो सेना और भी कठोर कदम उठा सकती है, जो वहां की स्थिति को और खराब कर सकते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय हस्तक्षेप और क्षेत्रीय स्थिरता

यदि बलूचिस्तान में संघर्ष अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ध्यान आकर्षित करता है, तो अमेरिका, चीन, भारत और अन्य राष्ट्रों की भागीदारी बढ़ सकती है। अंतर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा राजनयिक हस्तक्षेप किया जा सकता है, जो बलूचिस्तान के मुद्दे को हल करने के लिए बातचीत का मार्ग खोल सकता है।

खिलाफ पूरे बलूचिस्तान में व्यापक विरोध प्रदर्शन हुए। यह एक ऐसा अपराध था, जिसे मानवता कभी नहीं भूल सकती।

2018 - सीपीईसी का विरोध, संसाधनों का शोषण:

बलूचिस्तान में चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (सीपीईसी) के निर्माण के खिलाफ बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन हुए। बलूच विद्रोहियों का मानना था कि इस परियोजना से उनके प्राकृतिक संसाधनों का और शोषण होगा, जबकि स्थानीय जनता को इसका कोई लाभ नहीं मिलेगा। यह एक ऐसा डर था, जो सच हो रहा था।

2020-2021 - विद्रोहियों के हमले, सेना के जवाबी हमले:

बलूच विद्रोही संगठनों ने पाकिस्तान के सेना के ठिकानों और सीपीईसी से संबंधित परियोजनाओं पर कई हमले किए। इसके जवाब में पाकिस्तानी सेना ने बलूचिस्तान में कड़ी कार्रवाई की, जिससे नागरिकों और विद्रोहियों के बीच संघर्ष तेज हो गया। यह एक ऐसा युद्ध था, जिसमें कोई विजेता नहीं था।

2022-2023 - राजनीतिक अस्थिरता, विद्रोहियों का उभार:

पाकिस्तान में इमरान खान की सरकार के पतन के बाद बलूच विद्रोहियों ने सरकार की कमजोर स्थिति का फायदा उठाते हुए हमले बढ़ा दिए। बलूचिस्तान में सीपीईसी परियोजनाओं, रेलवे, और सेना के ठिकानों पर हमले किए गए। यह एक ऐसा मौका था, जिसे विद्रोहियों ने हाथ से नहीं जाने दिया।

2025 - जाफर एक्सप्रेस का अपहरण, दुनिया का ध्यान:

बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी (बीएलए) ने जाफर एक्सप्रेस का अपहरण किया। यह घटना ने एक बार फिर बलूचिस्तान के संघर्ष को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुर्खियों में ला दिया, और यह दर्शाया कि बलूचिस्तान की आजादी की लड़ाई अभी भी जारी है।

यह क्रोनोलॉजी दिखाती है कि बलूचिस्तान के लोग पिछले 77 वर्षों से अपने अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए निरंतर संघर्ष कर रहे हैं, लेकिन पाकिस्तान की सेना और सरकार ने इस विद्रोह को कुचलने के लिए हर संभव प्रयास किया है। इस संघर्ष के दौरान बलूचिस्तान में हजारों लोग मारे गए, लापता हुए, और बलूच राष्ट्रवाद आज भी एक मजबूत विद्रोही ताकत के रूप में उभर रहा है। बलूचिस्तान की कहानी एक ऐसी कहानी है जो तब तक जारी रहेगी, जब तक न्याय और शांति स्थापित नहीं हो जाती। यह एक ऐसी उम्मीद है, जो कभी नहीं मरती।

बलूचिस्तान महाशक्तियों का अखाड़ा

बलूचिस्तान, पाकिस्तान का दक्षिण-पश्चिमी गढ़, न केवल पाकिस्तान के लिए खनिज संपदा का खजाना है, बल्कि दुनिया की महान शक्तियों के लिए भू-राजनीतिक महत्व का भी क्षेत्र है। यह एक ऐसा चौराहा है जहाँ महत्वाकांक्षाएँ टकराती हैं, जहाँ साम्राज्यों के सपने आकार लेते हैं और टूट जाते हैं, और जहाँ भविष्य के युद्धों के लिए रणनीतियाँ चुपचाप तैयार की जाती हैं। अपनी रणनीतिक भौगोलिक स्थिति और अपने प्राकृतिक संसाधनों के कारण, यह क्षेत्र अंतर्राष्ट्रीय शतरंज बोर्ड पर सिर्फ एक मोहरा नहीं है, बल्कि एक ऐसा केंद्र है जहाँ हर कदम मायने रखता है। चीन, अमेरिका, भारत, ईरान, अफगानिस्तान और रूस जैसे राष्ट्र यहाँ लगातार अपने हितों की रक्षा और विस्तार के लिए राजनयिक चालें चल रहे हैं, जैसे कुशल खिलाड़ी एक जटिल खेल में लगे हुए हैं। बलूचिस्तान का यह महत्व केवल इसके आर्थिक संसाधनों से संबंधित नहीं है, बल्कि यह क्षेत्र फारस की खाड़ी और अरब सागर जैसे जलमार्गों के पास स्थित होने के कारण अत्यंत रणनीतिक महत्व का भी है।

बलूचिस्तान की अनूठी भौगोलिक स्थिति, इसके प्रचुर प्राकृतिक संसाधन और आसन्न समुद्री मार्ग इसे दुनिया की महान शक्तियों के लिए अत्यधिक आकर्षक बनाते हैं। एक ऐसे खजाने की कल्पना करें जो साम्राज्यों से घिरा हुआ है, जिनमें से प्रत्येक सबसे कीमती टुकड़ा हासिल करने के लिए लालायित है। इस कारण से, बलूचिस्तान वैश्विक शक्ति संघर्षों का केंद्र बन गया है, जहाँ प्रत्येक महाशक्ति अपनी उपस्थिति को मजबूत करने और क्षेत्र में अपना प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयास कर रही है। यह एक ऐसा खेल है जहाँ दांव ऊंचे हैं और पुरस्कार और भी आकर्षक हैं।

बलूचिस्तान का भू-राजनीतिक महत्व कई कारणों से है, जो इसे महान शक्तियों की नजरों में एक बेशकीमती गहना बनाता है:

भौगोलिक स्थिति

बलूचिस्तान, पाकिस्तान के अरब सागर तट के किनारे स्थित है और यह ग्वादर बंदरगाह जैसे महत्वपूर्ण समुद्री अड्डों का घर है। ग्वादर बंदरगाह, जिसे चीन द्वारा विकसित किया जा रहा है, फारस की खाड़ी और हिंद महासागर के रणनीतिक जलमार्गों के पास स्थित है, जो दुनिया के तेल परिवहन के मुख्य मार्ग हैं। इस बंदरगाह को वैश्विक ऊर्जा बाजारों तक पहुंच को नियंत्रित करने वाले एक लॉकिंग पॉइंट की तरह समझें। यह बलूचिस्तान के रणनीतिक महत्व को बढ़ाता है।

प्राकृतिक संसाधन:

बलूचिस्तान में प्राकृतिक गैस, तेल, कोयला, तांबा और सोना जैसे प्रमुख खनिज पाए जाते हैं। ये संसाधन न केवल बलूचिस्तान को आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण बनाते हैं, बल्कि यह क्षेत्र कई देशों के लिए आर्थिक शक्ति का स्रोत भी है। यह एक ऐसा खजाना है जो देशों को आकर्षित करता है, जिनमें से प्रत्येक अपनी अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने और अपने प्रभाव क्षेत्र का विस्तार करने की उम्मीद करता है। हालांकि, इन संसाधनों का लाभ बलूचिस्तान की स्थानीय आबादी तक नहीं पहुंच रहा है, क्योंकि पाकिस्तान की सरकार और सेना इस क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कर रही है। यह एक विडंबना है कि भूमि की प्रचुरता का लाभ इसके अपने लोगों को नहीं मिल रहा है।

चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा

चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (सीपीईसी) के कारण बलूचिस्तान का महत्व और भी बढ़ गया है। यह गलियारा चीन के पश्चिमी प्रांत शिनजियांग को ग्वादर बंदरगाह से जोड़ता है, और चीन को मध्य एशिया, पश्चिम एशिया और अफ्रीका के बाजारों तक पहुंचने के लिए एक महत्वपूर्ण मार्ग प्रदान करता है। यह एक आधुनिक सिल्क रोड है, जो व्यापार और प्रभाव के लिए भूमि-आधारित शॉर्टकट प्रदान करता है। इसके साथ ही, यह चीन के ऊर्जा आपूर्ति मार्गों को सुरक्षित करने में भी सहायता करता है।

चीन ने बलूचिस्तान में अपनी उपस्थिति मजबूत की है, खासकर ग्वादर बंदरगाह के माध्यम से। ग्वादर चीन के लिए अत्यंत रणनीतिक महत्व का है, क्योंकि यह बंदरगाह चीन को फारस की खाड़ी के तेल मार्गों तक पहुंचने के लिए एक सीधा और त्वरित मार्ग प्रदान करता है। यह बंदरगाह चीन के लिए एक जीवन रेखा की तरह है, जो ऊर्जा सुरक्षा और आर्थिक विकास प्रदान करता है। इसके अलावा, सीपीईसी परियोजना चीन की 'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव' (बीआरआई) का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो चीन को वैश्विक व्यापार मार्गों तक पहुंचने में मदद करती है।

चीन ने ग्वादर के विकास में 62 बिलियन डॉलर से अधिक का निवेश किया है और बलूचिस्तान में स्थिरता बनाए रखने के लिए पाकिस्तान सरकार और सेना पर दबाव डाल रहा है। चीन, एक कुशल रणनीतिकार की तरह, अपने निवेश को सुरक्षित करने के लिए राजनीतिक स्थिरता की आवश्यकता को समझता है। हालांकि, चीन के निवेश और श्रमिकों और इंजीनियरों पर बलूच विद्रोहियों द्वारा बार-बार किए जाने वाले हमलों के कारण चीन की सुरक्षा चिंताएं बढ़ गई हैं। चीन का उद्देश्य है कि बलूचिस्तान में राजनीतिक स्थिरता बनी रहे, ताकि उसकी परियोजनाओं को बिना किसी बाधा के पूरा किया जा सके।

दूसरी ओर, बलूचिस्तान अमेरिका के लिए रणनीतिक महत्व रखता है क्योंकि यह अफगानिस्तान और फारस की खाड़ी के पास स्थित है। बलूचिस्तान में शम्सी एयरबेस का उपयोग एक समय में ड्रोन हमलों के लिए किया जाता था, जो आतंकवाद के खिलाफ अमेरिकी अभियान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा था। यह क्षेत्र आतंकवाद विरोधी अभियानों के लिए एक सुविधाजनक मंच के रूप में कार्य करता है। हालांकि अमेरिका सीधे तौर पर बलूचिस्तान में सैन्य हस्तक्षेप नहीं करता है, लेकिन वह चीन के बढ़ते प्रभाव का मुकाबला करने के लिए राजनयिक रूप से सक्रिय रहता है।

अमेरिका लगातार बलूचिस्तान में मानवाधिकारों के हनन के लिए पाकिस्तान को जवाबदेह ठहरा रहा है, और ग्वादर में चीन द्वारा की जा रही गतिविधियों के बारे में पाकिस्तान पर दबाव डाल रहा है। अमेरिका, एक सतर्क प्रहरी की तरह, क्षेत्र में चीन के विस्तार को नियंत्रित करने के लिए प्रतिबद्ध है। अमेरिका बलूचिस्तान को रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण मानता है क्योंकि यह फारस की खाड़ी के पास स्थित है और यह पश्चिम एशिया के ऊर्जा संसाधनों तक आसान पहुंच प्रदान करता है।

जहां तक भारत का सवाल है, बलूचिस्तान भारत के लिए एक संवेदनशील मुद्दा है। भारत ने कई अवसरों पर बलूचिस्तान में मानवाधिकारों के उल्लंघन के लिए पाकिस्तान की आलोचना की है। भारत पर बलूचिस्तान के विद्रोहियों का समर्थन करने के भी आरोप लगाए गए हैं, हालांकि भारत ने इसे कभी स्वीकार नहीं किया है। भारत बलूचिस्तान मुद्दे को पाकिस्तान पर दबाव बनाने के लिए एक राजनयिक हथियार के रूप में देखता है। यह एक जटिल खेल है जहां सहानुभूति और रणनीतिक हितों के बीच की रेखा अक्सर धुंधली हो जाती है।

भारत का मुख्य उद्देश्य है कि पाकिस्तान की पश्चिमी सीमाओं पर अस्थिरता बनी रहे, ताकि पाकिस्तानी सेना का ध्यान आंतरिक समस्याओं पर केंद्रित रहे। यह एक क्लासिक रणनीति है जहां पड़ोसियों को व्यस्त रखकर अपने स्वयं के लाभों को सुरक्षित किया जा सकता है। इसके साथ ही, सीपीईसी परियोजना भारत के लिए चिंता का कारण है, क्योंकि यह पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर से होकर गुजरती है। ग्वादर बंदरगाह का विकास भी भारत के लिए एक सुरक्षा चुनौती है, क्योंकि यह पाकिस्तान और चीन को एक रणनीतिक लाभ प्रदान करता है।

संयोग से, ईरान बलूचिस्तान के पश्चिमी भाग से सटा हुआ है और बलूच आबादी भी इसके दक्षिण-पूर्वी क्षेत्र में निवास करती है। ईरान

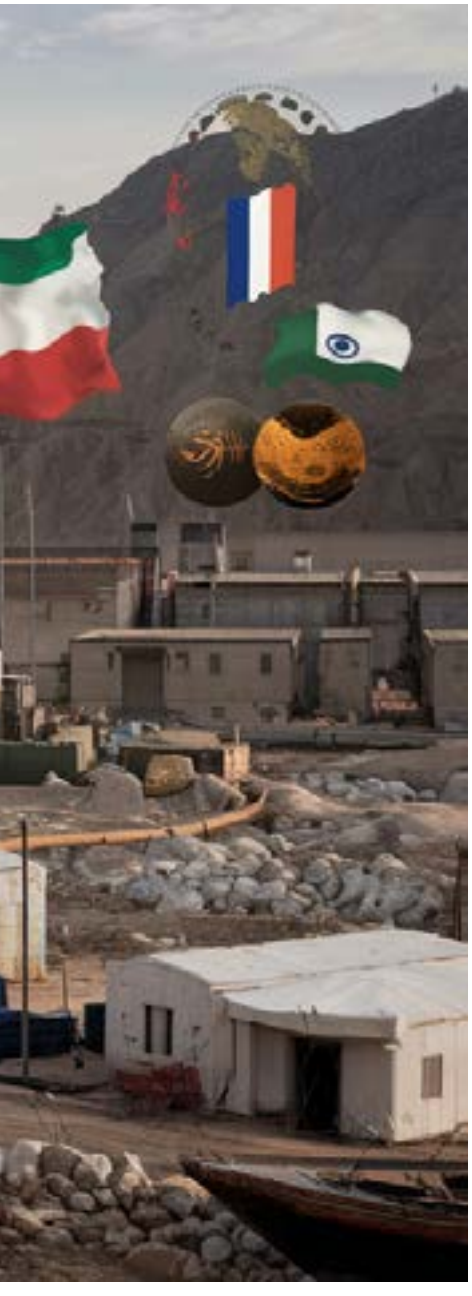

प्रतीकात्मक फोटो

को चिंता है कि बलूच विद्रोह पाकिस्तान से उसके क्षेत्र में नहीं फैलेगा। ईरान के लिए बलूचिस्तान में स्थिरता बनाए रखना आवश्यक है ताकि अस्थिरता उसके सीमा क्षेत्र में न फैले। एक क्षेत्रीय खिलाड़ी के रूप में, ईरान अपने पड़ोस में स्थिरता बनाए रखने पर ध्यान केंद्रित करता है।

इसके अलावा, ईरान का चाबहार बंदरगाह भी ग्वादर के पास स्थित है और भारत द्वारा समर्थित है। चाबहार बंदरगाह का उद्देश्य ग्वादर का एक विकल्प प्रदान करना है, जिसके तहत ईरान और भारत के बीच एक आर्थिक और रणनीतिक साझेदारी विकसित हुई है।

बलूचिस्तान में स्थिति अफगानिस्तान के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह तालिबान और अन्य आतंकवादी संगठनों के लिए एक सुरक्षित ठिकाना रहा है। पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी, आईएसआई, लंबे समय से अफगानिस्तान में अपने हितों की रक्षा के लिए बलूचिस्तान का उपयोग कर रही है। बलूचिस्तान के माध्यम से अफगानिस्तान में सैन्य और रसद सहायता प्रदान करना आसान है। अफगानिस्तान, एक संघर्षग्रस्त देश, बलूचिस्तान को स्थिरता और अस्थिरता दोनों के स्रोत के रूप में देखता है।

तालिबान के शासन के बाद अफगानिस्तान और पाकिस्तान के बीच तनाव बढ़ गया है, और बलूचिस्तान इस राजनयिक खींचातानी में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। पाकिस्तान बलूचिस्तान में स्थिरता बनाए रखने की कोशिश कर रहा है ताकि अफगानिस्तान में उसके हितों की रक्षा हो सके।

यद्यपि, रूस सीधे तौर पर बलूचिस्तान में शामिल नहीं है, फिर भी यह पाकिस्तान और चीन के साथ अपने संबंधों के माध्यम से क्षेत्र में अपनी स्थिति मजबूत कर रहा है। चीन और पाकिस्तान के साथ रूस की बढ़ती निकटता उसे इस क्षेत्र के भू-राजनीतिक खेल में एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी बनाती है। यह एक ऐसा खेल है जहां सहयोगी लगातार बदलते रहते हैं और शक्ति का संतुलन लगातार बदल रहा है। इसके अलावा, रूस का लक्ष्य मध्य और पश्चिम एशिया में अपनी राजनयिक उपस्थिति को और मजबूत करना है।

बलूचिस्तान आज दुनिया की अग्रणी महान शक्तियों के लिए राजनयिक विवाद का केंद्र बना हुआ है। इसके प्राकृतिक संसाधन, रणनीतिक स्थिति और वैश्विक व्यापार मार्गों से निकटता इसे बेहद महत्वपूर्ण बनाती है। चीन, अमेरिका, भारत, ईरान, अफगानिस्तान और रूस सभी यहां अपने-अपने भू-राजनीतिक और आर्थिक हितों की रक्षा के लिए राजनयिक चालें चल रहे हैं। यह एक ऐसा नृत्य है जहां हर कोई आगे बढ़ने की कोशिश कर रहा है, लेकिन कोई भी पूरी तरह से नियंत्रण में नहीं है।

बलूचिस्तान में स्थिति आने वाले वर्षों में और भी जटिल हो सकती है, खासकर महान शक्तियों के बीच बढ़ते तनाव और आर्थिक हितों के लिए प्रतिस्पर्धा के जारी रहने के साथ। इस भू-राजनीतिक क्षेत्र में, बलूचिस्तान का भविष्य अनिश्चित है, और इसका भाग्य क्षेत्र और उससे परे की शक्तियों के बीच जटिल अंतःक्रिया से बंधा हुआ है।

हार्ड स्टेट, सॉफ्ट स्टेट

हमारी हिंसा आतंकवाद का प्रतिरोध है, उनकी हिंसा आतंकवाद है...

अशरफ जहांगीर काजी

हाल ही में, सेना प्रमुख ने बलूचिस्तान में जाफ़र एक्सप्रेस ट्रेन पर हुए हमले के बाद संसद को संबोधित किया। उन्होंने कहा कि उग्रवाद से लड़ने के लिए पाकिस्तान को एक "हार्ड स्टेट" बनना होगा और सवाल किया कि एक 'सॉफ्ट स्टेट' में कब तक अनगिनत जानें बलिदान की जाती रहेंगी, और कब तक शासन की कमियों को सैनिकों और शहीदों के खून से भरा जाएगा।

वैश्विक समुदाय ने भी इस घटना को आतंक का कृत्य बताया। फिर भी, आपराधिक कृत्यों सहित मानवीय कार्यों का एक संदर्भ और कारण होता है जिसे यह सुनिश्चित करने के लिए समझने की आवश्यकता है कि वे दोहराए न जाएं। बलूचिस्तान में ऐसा कभी नहीं हुआ। स्वतंत्रता के बाद से, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से केंद्र द्वारा शासन किया गया है। सभी प्रकार के शोषण और मानवाधिकारों और राजनीतिक अधिकारों से वंचित किए जाने के खिलाफ विरोध को अविश्वास के साथ समान माना जाता है, और जब निराशा में वे विद्रोह का रूप लेते हैं तो उन्हें निर्दयतापूर्वक विद्रोह, राजद्रोह और आतंक के कृत्यों के रूप में कुचल दिया जाता है।

दशकों में मारे गए बलूचों, अपंग और घायल हुए बलूचों, प्रताड़ित किए गए बलूचों, लापता बलूचों, हमेशा के लिए आघातग्रस्त बलूच परिवारों और लगभग अपूरणीय रूप से अलग-थलग पड़े बलूच बुद्धिजीवियों की संख्या शायद लाखों तक पहुँच गई है। राजनीतिक रूप से उदारवादी और श्रद्धेय बलूच नेता अताउल्लाह मेंगल के बेटे,

बलूचिस्तान के पूर्व मुख्यमंत्री अख्तर मेंगल ने चेतावनी दी है कि बलूचिस्तान में आज की स्थिति पाकिस्तान के लिए सबसे बड़ा खतरा है। इसके अलावा, बलूच अलगाववाद बढ़ते पश्तून अलगाववाद के साथ जुड़ गया है। यह समस्या को किसी भी सैन्य समाधान से परे बढ़ा देता है। तदनुसार, निरंतर सैन्य कार्रवाई केवल पड़ोसियों को हस्तक्षेप करने के लिए बढ़े हुए अवसर और प्रोत्साहन प्रदान करेगी, जो अंततः स्थिति को नियंत्रण से बाहर कर देगी।

पंजाब में संशयवादी राजनेता कहते थे "बलूचिस्तान यहां से नहीं दिखता"। इस रवैये के साथ समस्या मेटास्टेसाइज हो गई है, और आज पूरा पाकिस्तान बलूचिस्तान बन गया है जबकि पाकिस्तान 'ग्रेटर पंजाब' में तब्दील होता जा रहा है। पिछली बार जब वन यूनिट के रूप में 'ग्रेटर पंजाब' बनाने का प्रयास किया गया था, तो इससे पाकिस्तान का विघटन हो गया। तदनुसार, हमारे राष्ट्रीय नीति निर्माताओं को इस बात से अवगत होने की आवश्यकता है कि बिना सोचे-समझे बनाई गई नीतियों से अल्पकालिक लाभ हो सकता है, लेकिन इसके कहीं अधिक गंभीर और अपूरणीय दीर्घकालिक परिणाम होते हैं। दुर्भाग्य से, एक देश के रूप में, हम अपनी कई आपदाओं से कभी नहीं सीखते हैं या सीखने नहीं देते।

"सॉफ्ट स्टेट" की अवधारणा स्वीडिश अर्थशास्त्री और समाजशास्त्री गुन्नार मिर्डल द्वारा गढ़ी गई थी, जिन्होंने 1968 में अपना प्रसिद्ध एशियाई ड्रामा लिखा था। यह अवधारणा अब "फेल्ड स्टेट" में विकसित हो गई है। मिर्डल ने सॉफ्ट स्टेट को "कमजोर शासन, प्रभावी कानून प्रवर्तन की कमी और एक सामान्य सामाजिक और राजनीतिक अनुशासनहीनता" के रूप में परिभाषित किया। यह आज लगभग पूरी तरह से पाकिस्तान की राजनीतिक स्थिति का वर्णन

बलूचिस्तान के पूर्व मुख्यमंत्री अख्तर मेंगल, जो एक राजनीतिक रूप से उदारवादी हैं और सम्मानित बलूच नेता अताउल्लाह मेंगल के बेटे हैं, ने चेतावनी दी है कि बलूचिस्तान में आज की स्थिति पाकिस्तान के लिए सबसे बड़ा खतरा है। इसके अलावा, बलूच अलगाववाद बढ़ते पश्तून अलगाववाद से जुड़ गया है। यह किसी भी सैन्य समाधान से परे समस्या को बढ़ा देता है।

करता है। जटिल राजनीतिक चुनौतियों को हल करने के लिए बल के उपयोग पर निर्भरता एक मजबूत या कठोर राज्य का संकेत नहीं है। इसके विपरीत, यह एक कमजोर सॉफ्ट स्टेट का प्रदर्शन है जो अपने ही नागरिकों के खिलाफ राज्य शक्ति के अप्रासंगिक प्रदर्शन के साथ ऐसे मुद्दों को गंभीरता से संबोधित करने से कतराता है।

मिर्डल ने कहा कि दक्षिण एशियाई देशों में, सामाजिक और आर्थिक क्रांतियों की आवश्यकता के बारे में बात करने के बावजूद, नीति निर्माता "पारंपरिक सामाजिक व्यवस्था को बाधित न करने के लिए सबसे अधिक सावधानी बरतते हैं"। नतीजतन, "वे सॉफ्ट स्टेट बने रहते हैं जो कि वह हासिल नहीं कर सकते और उन्हें वह चाहिए भी।" समाज और अर्थव्यवस्था के लिए जो सच है, वही राष्ट्र निर्माण पर भी

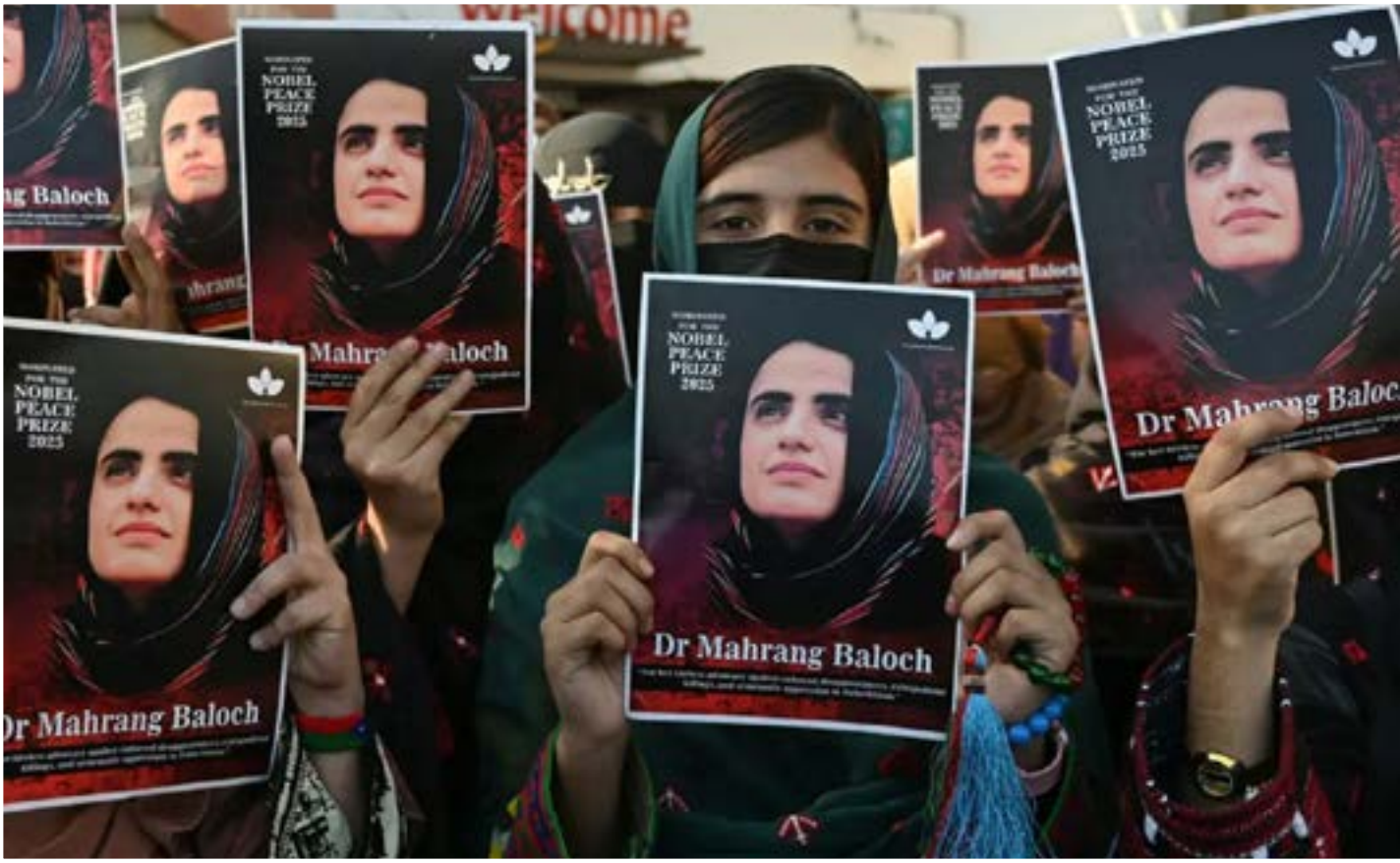

लागू होता है। एक सैन्य 'कमान एकता' दृष्टिकोण कभी भी जटिल ऐतिहासिक, पहचान, वर्ग संघर्ष, संसाधन साझाकरण, सामाजिक-राजनीतिक और संस्थागत चुनौतियों को हल नहीं कर सकता है। यह दिखावा कि ऐसा हो सकता है, वास्तव में एक सॉफ्ट स्टेट 'नहीं कर सकते' का लक्षण है जो कि हार्ड स्टेट 'कर सकते हैं' जैसा होने का दिखावा करता है। साठ साल बाद, भारत इस सॉफ्ट स्टेट सिंड्रोम से काफी हद तक उभरा है - भले ही पूरी तरह से या अपरिवर्तनीय रूप से नहीं। दुख की बात है कि पाकिस्तान इसमें फंसा हुआ है।

2011 में, प्रो. अनाटोल लिवेन ने अपनी पुस्तक 'पाकिस्तानः ए हार्ड कंट्री' प्रकाशित की। दिलचस्प बात यह है कि उन्होंने 'रिक्विम फॉर ए कंट्री' को एक वैकल्पिक शीर्षक के रूप में माना। पाकिस्तान के बारे में उनका विवरण अभी भी लागू होता है, यानी, "विभाजित, अव्यवस्थित, आर्थिक रूप से पिछड़ा, भ्रष्ट, हिंसक, अन्यायपूर्ण, अक्सर गरीबों और महिलाओं के प्रति बर्बरतापूर्वक दमनकारी, और अत्यंत खतरनाक प्रकार के उग्रवाद और आतंकवाद का घर"। जबकि अमेरिका के 'आतंक पर युद्ध' में पाकिस्तान की भागीदारी ने आतंकवाद के तत्काल खतरे को कम कर दिया, लेकिन इसने

लीवेन के अनुसार, पाकिस्तान एक सॉफ्ट स्टेट है, लेकिन इसका समाज हार्ड है। यह किसी बड़े बदलाव का प्रतिरोधक भी है।

इसके गहरे कारणों को संबोधित नहीं किया। नतीजतन, हम वहीं हैं जहां हैं।

लिवेन के अनुसार, जबकि पाकिस्तान राज्य एक सॉफ्ट स्टेट है, इसका समाज कठोर और टिकाऊ है। यह कट्टरपंथी बदलाव के प्रति प्रतिरोधी है। उनका सुझाव है कि यह किसी प्रकार के निम्न-स्तरीय संतुलन में फंसा हुआ है और अजीब तरह से यह निम्न-स्तरीय लचीलापन राज्य के प्रयासों से ज्यादा पाकिस्तान के अस्तित्व को सुनिश्चित करता है। कोई पूछ सकता है कि क्या यह वरदान है या अभिशाप। यह किसी को चीनी कहावत की याद दिलाता है "आप दिलचस्प समय में जिएं!" और पाकिस्तान में हम वास्तव में दिलचस्प लेकिन विश्वासघाती समय में जी रहे हैं।

एटॉमिक साइंटिस्ट्स के बुलेटिन की वार्षिक रिपोर्ट में सूचीबद्ध आज दुनिया के सामने मौजूद परस्पर जुड़ी चुनौतियों में जलवायु का गर्म होना और उसके परिणाम शामिल हैं; परमाणु युद्ध का खतरा; होने वाली महामारी; अनियमित कृत्रिम बुद्धिमत्ता विकास; अमेरिका और यूरोप में फासीवादी, नस्लवादी और दूर-दक्षिणपंथी कब्जों के परिणामस्वरूप लोकतांत्रिक कमियां चौड़ी होना; इजरायल द्वारा मध्य पूर्व पर जारी जनसंहार की नीतियां, और नरसंहार घड़ी द्वारा दो 'नरसंहार अलर्ट' के अनुसार भारत द्वारा दक्षिण एशिया में धमकी; आदि। एक विफल राज्य, चाहे वह सॉफ्ट या हार्ड स्टेट समाज के कारण हो, या इसके विपरीत, उसके पास दीर्घकालिक अस्तित्व की लगभग कोई संभावना नहीं है।

एक नेल्सन मंडेला जैसी पहल की नितांत आवश्यकता है ताकि देश को ठीक करने और राष्ट्रीय सुलह लाने में मदद मिल सके। इसका जोर हमारी दुखद अतीत को पीछे छोड़ने और लोगों को जवाबदेह ठहराने पर होगा, लेकिन उनके पिछले अपराधों के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों पर मुकदमा चलाने पर नहीं। यह कई पीड़ितों को अस्वीकार्य हो सकता है, लेकिन इसे 8 फरवरी, 2024 को राष्ट्र के साथ की गई गहरी गलतियों को दूर करने के लिए किसी भी डर को दूर करना चाहिए, और नागरिक सर्वोच्चता, न्यायिक और संसदीय स्वतंत्रता, आवश्यक सामाजिक-आर्थिक सुधारों और बिना मिलावट वाले संवैधानिक और लोकतांत्रिक शासन पर समझौता किए बिना सेना की छवि को बहाल करने की प्रक्रिया शुरू करनी चाहिए। पाकिस्तान की मुक्ति के इस रास्ते पर कोई भी हारने वाला नहीं होना चाहिए।

(लेखक अशरफ जहांगीर काजी अमेरिका, भारत और चीन में पूर्व राजदूत, और इराक और सूडान में संयुक्त राष्ट्र मिशन के प्रमुख हैं।)

पाकिस्तानी सेना

रक्षक या उत्पीड़क?

संदीप कुमार

23 मार्च को पाकिस्तान दिवस के मौके पर पाकिस्तानी सेना ने अपनी ताकत का प्रदर्शन किया, लेकिन इस दिखावे के पीछे छिपी है एक कड़वी सच्चाई। आज, पाकिस्तानी सेना आंतरिक रूप से विभाजित और कमजोर होती जा रही है, और इसका सबसे बड़ा कारण है अपने ही नागरिकों के प्रति उसका क्रूर रवैया और आतंकवाद से निपटने की गलत नीतियां।

हाल के दिनों में पाकिस्तानी सेना पर आतंकवादी हमलों में तेजी आई है, लेकिन इससे भी गंभीर बात यह है कि सेना ने अपने ही नागरिकों पर अत्याचार करना शुरू कर दिया है, जिससे निचले स्तर के जवानों के बीच असंतोष की आग भड़क उठी है। सेना के भीतर का असंतोष तेजी से बढ़ रहा है, और विभिन्न रिपोर्टों से पता चलता

है कि निचले रैंक के जवानों में गहरी नाराजगी है। कई सैनिक अब खुले तौर पर सेना प्रमुख के इस्तीफे की मांग कर रहे हैं। सेना के आंतरिक विभाजन और इस तरह की असंतोषपूर्ण स्थिति ने उसकी प्रभावशीलता पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं।

पाकिस्तानी सेना के 'आतंकवाद विरोधी' अभियान पूरी तरह से विफल होते दिखाई दे रहे हैं। ये अभियान केवल दमन और अत्याचार पर आधारित हैं, जिनसे न तो आतंकवाद खत्म हो रहा है और न ही जनता का समर्थन मिल रहा है। बलूचिस्तान में मेहरंग बलोच जैसे शांतिपूर्ण प्रदर्शनकारियों को आतंकवाद के आरोप में गिरफ्तार करना स्थानीय आबादी के बीच असंतोष को और बढ़ा रहा है। सेना की इस क्रूरता ने बलूचिस्तान की जनता को और अधिक उग्र कर दिया है, और वहां विरोध प्रदर्शनों की संख्या में वृद्धि हो रही है।

पाकिस्तानी सेना की सबसे बड़ी विफलताओं में से एक बलूचिस्तान के साथ उसका बर्ताव है। सेना ने बलूचिस्तान को एक उपनिवेश की तरह माना है और वहां के लोगों के साथ वैसा ही व्यवहार किया है जैसा उपनिवेशवादी ताकतें अपने उपनिवेशों के साथ करती थीं। बलूचिस्तान में 11वीं कोर और अन्य सेना बलों की बड़ी संख्या में तैनाती के बावजूद, क्षेत्र सरकार के नियंत्रण से बाहर हो चुका है।

सेना की इस विफलता का एक प्रमुख कारण यह है कि पाकिस्तानी सेना ने हमेशा आतंकवाद को एक रणनीतिक उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया है, लेकिन अब यह रणनीति उसके खिलाफ जा रही है। सेना द्वारा समर्थित और प्रशिक्षित आतंकवादी समूह अब सेना के खिलाफ ही हमले कर रहे हैं। सेना ने जिस तरह से आतंकवाद से निपटने का तरीका अपनाया है – जिसमें बमबारी, गोलाबारी और अपने ही नागरिकों पर अत्याचार शामिल है – वह पूरी तरह से विफल साबित हो रहा है।

पाकिस्तानी संसद में भी बलूचिस्तान की स्थिति पर गंभीर सवाल उठाए जा रहे हैं। मौलाना फजलुर रहमान और पूर्व गृह मंत्री राना सनाउल्लाह जैसे वरिष्ठ नेताओं ने चेतावनी दी है कि पाकिस्तान की भौगोलिक सीमाएं जल्द ही बदल सकती हैं। यह बयान स्पष्ट रूप से बलूचिस्तान में सरकार की घटती पकड़ और वहां बढ़ते विद्रोह को दर्शाता है।

कभी अपनी पेशेवरता के लिए जानी जाने वाली पाकिस्तानी सेना आज अपने ही नागरिकों के बीच एक दमनकारी बल के रूप में देखी जा रही है। इस्लामाबाद में व्यापारियों से पैसे उगाही करने के आरोप, मानवाधिकारों के उल्लंघन और बलूचिस्तान में हिंसा जैसे मामलों ने सेना की साख को बुरी तरह से गिरा दिया है। यहां तक कि अंतरराष्ट्रीय मीडिया भी अब बलूचिस्तान के मुद्दे पर ध्यान देने लगा है।

पाकिस्तानी सेना आज एक ऐसे मोड़ पर खड़ी है जहां उसकी ताकत और प्रभावशीलता पर गंभीर सवाल उठाए जा रहे हैं। सेना का आतंकवाद से निपटने का तरीका न केवल विफल हो रहा है, बल्कि इसके परिणामस्वरूप जनता के बीच और भी असंतोष पैदा हो रहा है। बलूचिस्तान में सेना की क्रूरता और वहां के लोगों के साथ उपनिवेशवादी व्यवहार ने स्थिति को और अधिक गंभीर बना दिया है। इसके साथ ही, सेना के भीतर का असंतोष और निचले रैंक के जवानों की नाराजगी ने सेना की एकता और अनुशासन पर भी प्रश्नचिह्न खड़ा कर दिया है।

पाकिस्तानी सेना, जो कभी अपने पेशेवरता और अनुशासन के लिए जानी जाती थी, आज अपने ही नागरिकों के लिए एक दमनकारी बल बन गई है। अगर यह स्थिति जल्द ही नहीं सुधारी गई, तो पाकिस्तान को अपनी आंतरिक स्थिरता और राष्ट्रीय एकता के लिए गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है।

सेना को यह समझना होगा कि आतंकवाद का समाधान दमन और अत्याचार नहीं है, बल्कि जनता का विश्वास और समर्थन जीतना है। अगर सेना अपने नागरिकों के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार करती है और आतंकवाद से निपटने के लिए एक न्यायसंगत और समावेशी दृष्टिकोण अपनाती है, तो वह न केवल आतंकवाद को हरा सकती है, बल्कि अपनी साख और जनता का विश्वास भी फिर से हासिल कर सकती है। अन्यथा, सेना में बढ़ता असंतोष पाकिस्तान की नींव को हिला सकता है।

परिसीमन

क्या बदलेगा भारत का संघीय भविष्य?

संतु दास

भारत एक संघीय गणराज्य है, जिसे संविधान के अनुच्छेद 1 में 'राज्यों का संघ' बताया गया है। यह ढांचा, जहां देश की विविधता को एकता के सूत्र में बांधता है, वहीं केंद्र और राज्यों के बीच शक्ति संतुलन और क्षेत्रीय प्रतिनिधित्व की चुनौतियां भी खड़ी करता है। भारतीय संविधान की धाराओं और संशोधनों के ज़रिए राज्यों को स्वायत्तता देने की कोशिश की गई है, लेकिन अंतिम अधिकार केंद्र सरकार के पास ही रहता है। परिसीमन का मुद्दा भी इसी संघीय ढांचे का एक अहम पहलू है, जो राज्यों और केंद्र के बीच सत्ता और राजनीतिक प्रतिनिधित्व को प्रभावित करता है।

परिसीमन का मुख्य उद्देश्य जनसंख्या के आधार पर संसदीय और विधानसभा क्षेत्रों का पुनर्निर्धारण करना है, ताकि हर निर्वाचन क्षेत्र में जनसंख्या का समान प्रतिनिधित्व हो। हालांकि,

जनसंख्या नियंत्रण को बढ़ावा देने के लिए 1976 में 42वें संविधान संशोधन द्वारा 1971 की जनगणना के आधार पर होने वाले परिसीमन को 2026 तक स्थगित कर दिया गया था। अब जब 2026 नज़दीक है, तो परिसीमन का मुद्दा फिर से चर्चा में है, और ऐसा लगता है कि परिसीमन आयोग इस काम को नए सिरे से करेगा। लेकिन अगर यह प्रक्रिया सही तरीके से नहीं हुई, तो यह पुरानी क्षेत्रीय समस्याओं को फिर से उभार सकती है, जैसा कि अतीत में भाषा और राज्य निर्माण से जुड़े आंदोलनों के दौरान हुआ था।

भारतीय संघीय ढांचे की खासियत यह है कि केंद्र और राज्य दोनों के पास अपनी-अपनी शक्तियां और अधिकार हैं, जिनका बंटवारा संविधान के अनुच्छेद 246 और सातवीं अनुसूची के तहत किया गया है। परिसीमन की प्रक्रिया संविधान के अनुच्छेद 81 और 170 के तहत आती है। अनुच्छेद 81 लोकसभा सीटों के वितरण को नियंत्रित करता है, जिसमें यह सुनिश्चित किया जाता है कि हर राज्य में जनसंख्या के आधार पर समान प्रतिनिधित्व हो। इसी तरह, अनुच्छेद 170 राज्य विधानसभाओं की सीटों के पुनर्निर्धारण को विनियमित करता है।

परिसीमन आयोग का गठन जनसंख्या में बदलाव के हिसाब से निर्वाचन क्षेत्रों का पुनर्निर्धारण करने के लिए किया जाता है, ताकि हर नागरिक के वोट का महत्व बराबर रहे। लेकिन, जब 1976 में जनसंख्या नियंत्रण को बढ़ावा देने के लिए 1971 की जनसंख्या के आधार पर परिसीमन को स्थगित कर दिया गया, तो यह तय हुआ कि 2026 तक कोई नया परिसीमन नहीं होगा। इस फैसले का मकसद यह था कि जिन राज्यों ने जनसंख्या नियंत्रण के प्रयास किए, उन्हें उनके प्रयासों के लिए दंडित न किया जाए। अब, जब यह स्थगन खत्म हो रहा है, तो नए परिसीमन को लेकर बहस छिड़ गई है।

अगर 2026 का परिसीमन वर्तमान जनसंख्या आंकड़ों के आधार पर किया जाता है, तो यह उत्तर और दक्षिण भारत के बीच एक नए किस्म के राजनीतिक संघर्ष को जन्म दे सकता है। तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तेलंगाना जैसे दक्षिणी राज्यों, जिन्होंने जनसंख्या नियंत्रण के उपाय सफलता से अपनाए हैं, को यह डर है कि परिसीमन के बाद उनकी लोकसभा में सीटों की संख्या कम हो सकती है। वहीं दूसरी ओर, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और राजस्थान जैसे उत्तरी राज्य, जिनकी जनसंख्या वृद्धि दर ज़्यादा रही है, उनकी सीटों में बढ़ोतरी हो सकती है। इससे राजनीतिक प्रतिनिधित्व में एक असमानता पैदा हो सकती है, जो संघीय ढांचे में असंतुलन का कारण बन सकती है।

परिसीमन का यह असंतुलन सिर्फ राजनीतिक शक्ति तक ही सीमित नहीं रहेगा, बल्कि वित्तीय और विकासात्मक असमानताओं को भी बढ़ावा दे सकता है। चूंकि भारत की वित्तीय व्यवस्था केंद्रीयकृत है और राज्य सरकारें अपनी आय का एक बड़ा हिस्सा केंद्र से हासिल करती हैं, इसलिए संसदीय प्रतिनिधित्व राज्य के वित्तीय हितों की सुरक्षा में अहम भूमिका निभाता है। अगर किसी राज्य की लोकसभा सीटें कम होती हैं, तो उसकी केंद्र सरकार से वित्तीय सहायता प्राप्त करने की क्षमता भी कमज़ोर हो सकती है।

परिसीमन के बाद क्षेत्रीय और भाषाई असमानताएं भी बढ़ सकती हैं। उदाहरण के लिए, अगर उत्तर भारत के राज्यों को लोकसभा में ज़्यादा सीटें मिलती हैं, तो हिंदी भाषी राज्यों का प्रभाव बढ़ सकता है। यह स्थिति गैर-हिंदी भाषी राज्यों, खासकर दक्षिणी राज्यों में सांस्कृतिक और भाषाई असंतोष को जन्म दे सकती है। तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एम. के. स्टालिन पहले से ही इस मुद्दे पर विरोध जता रहे हैं और इसे दक्षिणी राज्यों के साथ अन्याय बता रहे हैं।

इसके अलावा, अगर लोकसभा में ज़्यादा जनसंख्या वाले राज्यों का प्रतिनिधित्व बढ़ता है, तो इसका असर राजनीतिक और वित्तीय मुद्दों पर भी पड़ेगा, जहां दक्षिणी राज्यों के हित और प्राथमिकताएं पीछे छूट सकती हैं। यह स्थिति संघीय ढांचे की मौजूदा कमज़ोरियों को और बढ़ा सकती है और क्षेत्रीय असंतोष को भड़काने का कारण बन सकती है।

इस परिसीमन संकट का हल ढूंढने के लिए कई विकल्पों पर विचार किया जा सकता है। सबसे आसान उपाय यह हो सकता है कि परिसीमन को फिर से स्थगित कर दिया जाए, जैसा कि एम. के. स्टालिन ने सुझाव दिया है। या यह हो सकता है कि लोकसभा की कुल सीटों की संख्या बढ़ाई जाए, ताकि राज्यों की वर्तमान सीटें बनी रहें, लेकिन नई जनसंख्या वास्तविकताओं के अनुसार सीटों का फिर से वितरण हो सके। हालांकि, यह भी एक आदर्श उपाय नहीं होगा, क्योंकि इससे उत्तरी राज्यों की सीटें फिर भी ज़्यादा हो जाएंगी, जिससे दक्षिणी राज्यों का प्रभाव कम हो जाएगा।

और सबसे प्रभावी उपाय यह हो सकता है कि परिसीमन प्रक्रिया में सिर्फ जनसंख्या के आधार पर सीटों के आवंटन के बजाय विकासात्मक मानदंडों को भी शामिल किया जाए। इससे यह सुनिश्चित होगा कि सिर्फ जनसंख्या वृद्धि के आधार पर राज्यों को राजनीतिक शक्ति न मिले, बल्कि उनकी शासन और विकासात्मक उपलब्धियों के आधार पर भी उनका प्रतिनिधित्व तय हो।

यह परिसीमन सिर्फ संख्या का खेल नहीं होना चाहिए, बल्कि इसे विकास, प्रगति और शासन की गुणवत्ता को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। इससे भारत के संघीय ढांचे को मज़बूत किया जा सकेगा और एक स्वस्थ लोकतांत्रिक व्यवस्था की ओर आगे बढ़ा जा सकेगा।

रक्षा शक्ति का उदय

भारत का बढ़ रहा निजी रक्षा उत्पादन की ओर झुकाव

एयर मार्शल अनिल चोपड़ा (सेवानिवृत्त)

भारत में रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता आजकल का चलन है। देश का रक्षा विनिर्माण क्षेत्र तेजी से नई दिल्ली की रणनीतिक और आर्थिक महत्वाकांक्षाओं की आधारशिला के रूप में उभर रहा है, और सरकारी नीतियां यह सुनिश्चित करने पर ध्यान केंद्रित कर रही हैं कि आधुनिक हथियार भारत में ही डिज़ाइन और निर्मित किए जाएं, या कम से कम, "मेड-इन-इंडिया" हों।

भारतीय सेना ने 5,000 से अधिक वस्तुओं की पहचान की है जिन्हें आयात करने के बजाय देश में ही निर्मित किया जाना चाहिए। सकारात्मक स्वदेशीकरण सूची (PIL) नामक यह पहल 2020 में शुरू हुई और इसका उद्देश्य लघु और मध्यम उद्यमों और स्टार्टअप सहित भारतीय निर्माताओं द्वारा स्वदेशीकरण के लिए रक्षा वस्तुओं की पेशकश करना है। रक्षा मंत्रालय के अनुसार, इससे पहले ही परिणाम मिलने लगे हैं।

रक्षा उत्पादन और निर्यात की निगरानी कार्यकारी के उच्चतम स्तर पर की जा रही है। महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किए जा रहे हैं: रक्षा पूंजी बजट का 75% भारत में बने उत्पादों की खरीद पर खर्च किया जाना है। निजी क्षेत्र को रक्षा उत्पादन में प्रवेश करने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है, जो अब तक सार्वजनिक क्षेत्र का प्रभुत्व था। कुछ बड़े औद्योगिक समूह रक्षा में प्रवेश कर चुके हैं, लेकिन बड़ी संख्या में सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम (MSMEs) और स्टार्टअप भी हैं जो वैश्विक निर्माताओं को अंतर्राष्ट्रीय गुणवत्ता वाले घटक और उपतंत्र का उत्पादन कर रहे हैं।

रक्षा उत्पादन और निर्यात की निगरानी कार्यपालिका के उच्चतम स्तर पर की जा रही है। महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किए जा रहे हैं: रक्षा पूंजी बजट का 75% भारत में बने उत्पादों की खरीद पर खर्च किया जाना है।

ऐतिहासिक बदलाव

स्वतंत्र भारत के लिए यह अलग था। 1950 के दशक की शुरुआत में, देश की अर्थव्यवस्था सोवियत "समाजवादी" दृष्टिकोण से बहुत प्रभावित थी, और उसने अपनी पंचवर्षीय योजनाओं को विकसित किया। शायद वह उन समय के लिए सबसे अच्छा था।

1950 के दशक के दौरान, भारत को इस्पात, रक्षा, रेलवे, निर्माण उपकरण, धातु, खनन, पेट्रोकेमिकल्स और कई अन्य औद्योगिक क्षेत्रों में सोवियत सहायता और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण मिला। सैन्य विमान, एयरो-इंजन और एवियोनिक्स कारखानों का निर्माण एक बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा था। एक समय में भारतीय सशस्त्र बलों के पास लगभग 85% सैन्य उपकरण सोवियत या रूसी मूल के थे।

उस समय, भारत का निजी क्षेत्र अपेक्षाकृत छोटा था और मुख्य रूप से जनता की दैनिक जरूरतों को पूरा करने पर केंद्रित था। सरकार ने आवश्यक बुनियादी ढांचे की स्थापना, बैंकिंग, कार निर्माण और विमान उत्पादन जैसे प्रमुख उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करने के लिए सार्वजनिक धन का उपयोग किया। यह दृष्टिकोण उस समय के लिए उपयुक्त हो सकता है।

लंबी अवधि में, सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों ने विशिष्ट ताकत और कमजोरियां प्रदर्शित कीं। सार्वजनिक क्षेत्र को सरकारी धन से लाभ होता है लेकिन सरकारी विभागों के नौकरशाही नियंत्रण में काम करता है। निर्णय लेना जटिल हो सकता है, और प्रगति की निगरानी भी इसी तरह बोझिल है। करदाताओं के पैसे दांव पर लगने के साथ, जवाबदेही कम होती है। वेतन सरकारी पैमाने के अनुसार तय किए जाते हैं, और एक बार भर्ती होने के बाद, कर्मचारियों को खराब प्रदर्शन के लिए खारिज करना मुश्किल लगता है, जिसके परिणामस्वरूप निजी क्षेत्र की तुलना में आमतौर पर कम उत्पादकता होती है।

सोवियत संघ के पतन के बाद, रूस को बाजार ताकतों के माध्यम से बाकी दुनिया के साथ प्रतिस्पर्धा करने की आवश्यकता का एहसास हुआ। भारत को भी यह एहसास हुआ कि उसे अपने रक्षा स्रोतों में विविधता लाने की आवश्यकता है।

1991 के आर्थिक सुधारों के बाद, जिसने बाजारों को विनियमित किया, आयात शुल्क कम किए और करों को कम किया, भारत की अर्थव्यवस्था बढ़ने लगी। इस वृद्धि ने रक्षा क्षेत्र में महत्वपूर्ण निवेश को सक्षम किया और एक मजबूत निजी क्षेत्र के उद्भव को चिह्नित किया। विनिर्माण क्षमताओं का विस्तार हुआ, जिसके परिणामस्वरूप कारों और मोटरसाइकिलों का बड़े पैमाने पर उत्पादन हुआ। इसके अतिरिक्त, पहले से संरक्षित रक्षा क्षेत्र निजी खिलाड़ियों के लिए खुलना शुरू हो गया।

निजी क्षेत्र प्रतिस्पर्धी वेतन के साथ शीर्ष प्रतिभा को आकर्षित करता है और गैर-प्रदर्शन करने वालों को जल्दी से खारिज कर सकता है। इसकी दक्षता कम श्रमिकों के साथ कार्यों को पूरा करने की अनुमति देती है, और यह आसानी से बैंकों और अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों से धन जुटा सकता है। सार्वजनिक क्षेत्र के विपरीत, जिसे संयुक्त उद्यमों और विदेशी सहयोग के लिए जटिल सरकारी अनुमोदन का सामना करना पड़ता है, निजी क्षेत्र इन अवसरों को तेजी से आगे बढ़ा सकता है। विदेशी निगम नौकरशाही बाधाओं से बचने के लिए भारतीय कंपनियों के साथ सीधे काम करना पसंद करते हैं। इसके अतिरिक्त, निजी क्षेत्र परिचालन चपलता में सुधार करते हुए वाणिज्यिक आवश्यकताओं के आधार पर आवश्यक तकनीकों और कच्चे माल का अधिग्रहण कर सकता है।

दिलचस्प बात यह है कि शीर्ष वैश्विक रक्षा कंपनियों में से 41 अमेरिका से हैं। सभी निजी हैं। इन कंपनियों का हथियारों से राजस्व 317 बिलियन डॉलर था, जो शीर्ष 100 कंपनियों के कुल राजस्व

का आधा था। शीर्ष पांच हथियार कंपनियां सभी अमेरिका स्थित थीं। शीर्ष 100 में नौ चीनी, तीन भारतीय और दो रूसी कंपनियां हैं। ये सभी सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियां थीं।

भारत की पहल

नई दिल्ली ने पिछले कुछ वर्षों में निजी कंपनियों को रक्षा विनिर्माण में भाग लेने के लिए आकर्षित करने के लिए कई कार्यक्रम और

नीतियां शुरू की हैं।

इसमें रक्षा उत्कृष्टता के लिए नवाचार (iDEX) शामिल है, जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय सुरक्षा को बढ़ाने वाले प्रोटोटाइप बनाकर रक्षा और एयरोस्पेस में नवाचार को बढ़ावा देना है; और डिफेंस इंडिया स्टार्टअप चैलेंज, जो स्टार्टअप और छोटे और मध्यम आकार की कंपनियों को राष्ट्रीय रक्षा के लिए प्रोटोटाइप बनाने और समाधानों का व्यावसायीकरण करने में सहायता करता है। इसके अतिरिक्त, 2020 रक्षा अधिग्रहण प्रक्रिया छोटे और मध्यम क्षेत्र की कंपनियों के लिए कुछ आदेश (1 बिलियन रुपये या 11.5 मिलियन डॉलर तक के मूल्य) आरक्षित करती है।

रक्षा मंत्रालय ने उद्योग निकायों को समर्पित रक्षा अध्याय बनाने और उद्योग को सरकार से जोड़ने और चिंताओं को दूर करने में मदद करने के लिए भी प्रोत्साहित किया है। अंत में, सरकार सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों पर रक्षा उद्योग के लिए तैयार ऋण योजनाएं विकसित करने के लिए दबाव डाल रही है, जिसमें भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (SIDBI) पहले से ही विशिष्ट विकल्प पेश कर रहा है।

सरकार ने इस बात पर भी जोर दिया है कि रक्षा में राज्य-नियंत्रित कंपनियां और एजेंसियां, जिनमें सबसे बड़ी, रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन (DRDO) भी शामिल है, जिसे 1950 के दशक के अंत में रक्षा उपकरण अनुसंधान का समर्थन करने के लिए बनाया गया था, को अपनी सुविधाएं प्रदान करके निजी क्षेत्र को सहायता प्रदान करनी चाहिए।

रक्षा प्रणालियों की परीक्षण, परीक्षण और प्रमाणन आवश्यकताओं के लिए एक स्वतंत्र नोडल अंब्रेला निकाय की स्थापना से पूंजी-गहन बुनियादी ढांचे को फिर से बनाने के लिए निवेश की आवश्यकता को कम करते हुए मौजूदा सुविधाओं तक पहुंच में सुधार होना चाहिए।

वर्तमान में, भारत में 16 रक्षा सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम (DPSU), 430 से अधिक लाइसेंस प्राप्त कंपनियां और लगभग 16,000 MSME हैं। उल्लेखनीय रूप से, इस उत्पादन का 21% निजी क्षेत्र से आता है, जो रक्षा आत्मनिर्भरता की ओर भारत की यात्रा को बढ़ावा देता है।

लंबे समय से यह भावना रही है कि राज्य के स्वामित्व वाली रक्षा कंपनियां अपनी तकनीक अनुसंधान और विकास कार्ड को अपने सीने से चिपकाए हुए हैं और निजी क्षेत्र के साथ साझा करने के लिए अनिच्छुक हैं। वे उन्हें भागीदारों के बजाय प्रतिस्पर्धियों के रूप में मानते रहते हैं। इस बीच, सरकार ने विदेशी कंपनियों को बढ़े हुए शासन और नियंत्रण अधिकार प्रदान किए हैं।

जबकि प्रमुख विदेशी रक्षा निर्माताओं ने भारत में रक्षा में निवेश करने के लिए टाटा, रिलायंस, अडानी, एलएंडटी और अन्य जैसे प्रमुख भारतीय समूह के साथ भागीदारी करना चुना है, सार्वजनिक क्षेत्र के साथ इसी तरह की परियोजनाएं कुछ ही रही हैं।

भारत सरकार की रक्षा खरीद नीतियों ने कई वैश्विक खिलाड़ियों, जैसे एयरबस, बीएई, बोइंग, कोलिन्स एयरोस्पेस, डसॉल्ट एविएशन, इज़राइल एयरोस्पेस इंडस्ट्रीज (IAI), पिलाटस, लॉकहीड मार्टिन, रेथियॉन, राफेल, सफरान और थेल्स को भारत में परिचालन स्थापित करने और संयुक्त उद्यम बनाने के लिए आकर्षित किया है।

उदाहरण के लिए, लॉकहीड मार्टिन और बोइंग ने टाटा समूह के साथ मिलकर वैश्विक आपूर्ति के लिए एयरो-स्ट्रक्चर और उप-प्रणालियों का निर्माण किया, जबकि अडानी समूह इजरायली एल्बिट समूह के साथ यूएवी और ड्रोन बना रहा है।

एयरबस C295 का निर्माण भारत में टाटा समूह द्वारा किया गया है। निजी क्षेत्र में इस पहली तरह के 'मेक इन इंडिया' एयरोस्पेस कार्यक्रम में दो दर्जन से अधिक छोटे और मध्यम आकार के आपूर्तिकर्ताओं को शामिल किए जाने की उम्मीद है, जो 30,000 से अधिक विस्तृत भागों, उप-असेंबली और घटक असेंबली का 60% से अधिक स्थानीय स्तर पर उत्पादन करेंगे।

रक्षा मंत्रालय ने एक विशेष प्रयोजन वाहन के माध्यम से उन्नत मध्यम लड़ाकू विमान (एएमसीए) कार्यक्रम में भाग लेने के लिए निजी क्षेत्र को रुचि की अभिव्यक्ति (ईओआई) जारी की। इस परियोजना में पीपीपी मॉडल के तहत एडीए, एचएएल और एक चयनित निजी कंपनी शामिल होगी। नाम की घोषणा मध्य 2025 तक होने की उम्मीद है।

कई निजी कंपनियां रक्षा इलेक्ट्रॉनिक्स, बड़े एयरो-स्ट्रक्चर घटक, उन्नत प्रौद्योगिकी घटक और उप-प्रणालियां बना रही हैं। डायनामिक टेक्नोलॉजीज सुखोई 30 एमकेआई लड़ाकू विमानों के लिए ऊर्ध्वाधर पंखों की असेंबली बनाती है। वे एयरबस को अपने A320 परिवार के विमानों और वाइड-बॉडी 330 विमानों के लिए एयरो-स्ट्रक्चर भी आपूर्ति कर रहे हैं। हैदराबाद की वीईएम टेक्नोलॉजीज एलसीए तेजस के लिए सेंटर फ्यूसलेज का निर्माण करती है।

ब्रह्मोस जेवी डीआरडीओ और रूसी एनपीओ मशीनोस्ट्रोयेनिया के बीच एक संयुक्त उद्यम है, जिन्होंने मिलकर ब्रह्मोस एयरोस्पेस का गठन किया है और मिसाइल उत्पादन और निर्यात में महत्वपूर्ण सफलता हासिल की है। AK-203 असॉल्ट राइफल का उत्पादन भारत में रूस और भारत के बीच एक संयुक्त उद्यम के माध्यम से किया जा रहा है। रूस ने हाल ही में भारतीय भागीदारों के साथ एक जेवी के माध्यम से भारत में पांचवीं पीढ़ी के सुखोई Su-57 बनाने की पेशकश की है। दिलचस्प बात यह है कि रूसी सेना बिहार के हाजीपुर जिले में बने जूते पहनती है।

महत्वाकांक्षी लक्ष्य

कुल मिलाकर, भारत के एयरोस्पेस और रक्षा क्षेत्र ने हाल के वर्षों में उल्लेखनीय वृद्धि देखी है, जिसमें निजी क्षेत्र अपने कारोबार में 20% का भारी योगदान दे रहा है। भारत में एक मजबूत अनुसंधान आधार और घटकों और उप-प्रणालियों के लिए एक मजबूत आपूर्ति श्रृंखला विकसित करना, जो वर्तमान में ज्यादातर विदेशों से प्राप्त होते हैं, एयरोस्पेस क्षेत्र में नागरिक और रक्षा प्रणालियों के लिए बाजार बनाने में मदद करेंगे।

भारत में घरेलू रक्षा उत्पादन पहले ही 2023-24 के वित्तीय वर्ष में 14.5 बिलियन डॉलर तक पहुंच गया है। सभी रक्षा पूंजी अधिग्रहणों का 75% घरेलू स्तर पर खरीदने के लक्ष्य से "मेक-इन-इंडिया" पहल को भारी बढ़ावा मिलेगा। चालू वित्तीय वर्ष में लक्ष्य 19 बिलियन डॉलर है, जिसमें 2029 तक रक्षा उत्पादन में 34 बिलियन डॉलर हासिल करने की आकांक्षा है।

इस बीच, भारत का रक्षा निर्यात पिछले साल 2.4 बिलियन डॉलर तक पहुंच गया, और सरकार ने 2028-29 तक रक्षा निर्यात का लक्ष्य 5.7 बिलियन डॉलर निर्धारित किया है। वर्तमान में, भारत 100 से अधिक देशों को निर्यात करता है, जिसमें 2023-24 में रक्षा निर्यात के लिए शीर्ष तीन गंतव्य अमेरिका, फ्रांस और आर्मेनिया हैं।

पारंपरिक रक्षा निर्माण से आगे बढ़ने के लिए, भारत को आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई), रोबोटिक्स, स्वायत्त वाहनों, हाइपरसोनिक तकनीक, निर्देशित ऊर्जा हथियारों, संवर्धित और आभासी वास्तविकता और ब्लॉकचेन जैसी प्रमुख भविष्य की तकनीकों में निवेश के लिए सार्वजनिक धन को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। ये निवेश वाणिज्यिक और सैन्य अनुप्रयोगों दोनों में भविष्य के नवाचारों की नींव रखेंगे। वैश्विक रक्षा निर्माण में एक प्रमुख स्थान सुरक्षित करने के लिए भारत के लिए बौद्धिक संपदा का विकास महत्वपूर्ण है।. ●

एयर मार्शल अनिल चोपड़ा (सेवानिवृत्त), भारतीय वायु सेना के अनुभवी लड़ाकू परीक्षण पायलट हैं और नई दिल्ली में सेंटर फॉर एयर पावर स्टडीज के पूर्व महानिदेशक हैं। यह लेख पहली बार RT.com पर प्रकाशित हुआ था। हम इसे साभार यहां फिर से प्रकाशित कर रहे हैं।

नीतीश की विरासत
उत्तराधिकार या विघटन?

संदीप कुमार

हाल के दिनों में बिहार की राजनीति में एक अहम सवाल उठ रहा हैः मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के बाद जनता दल (यूनाइटेड) का क्या भविष्य होगा? क्या यह पार्टी भविष्य में भाजपा में विलय हो जाएगी, या नीतीश कुमार के पुत्र निशांत जदयू का नेतृत्व संभालेंगे?

फिलहाल, मुख्यमंत्री नीतीश कुमार अगले छह महीने के बाद होने वाले बिहार विधानसभा चुनाव के लिए अपना संभावित अंतिम चुनावी युद्ध लड़ने की तैयारी कर रहे हैं। उनका लक्ष्य मुख्यमंत्री के रूप में पांचवां कार्यकाल हासिल करना है। नीतीश का वर्तमान ध्यान एक मजबूत भाजपा के साथ गठबंधन की जटिल राजनीति से निपटने और आगामी बिहार चुनावों में जीत हासिल करने पर केंद्रित है।

इस लेख में, हमने "नीतीश के बाद कौन?" के प्रश्न का विश्लेषण करने का प्रयास किया है। यह प्रश्न केवल एक राजनीतिक चर्चा या अकादमिक अध्ययन का विषय नहीं है, बल्कि यह जदयू की पहचान को नए सिरे से परिभाषित करता है। जहां अन्य पार्टियां मजबूत वैचारिक नींव पर टिकी हैं, वहीं जदयू मोटे तौर पर नीतीश कुमार के व्यक्तित्व और राजनीतिक कौशल से ही पहचानी जाती है। वर्तमान स्थिति को देखते हुए, ऐसा लगता है कि "नीतीश ही जदयू हैं, और जदयू ही नीतीश हैं।" हालांकि यह व्यक्तित्व-आधारित नेतृत्व सत्ता को मजबूत करने में प्रभावी रहा है, लेकिन इसने दूसरी पंक्ति के एक ऐसे मजबूत नेतृत्व के विकास को भी दबा दिया है जो निर्बाध रूप से बागडोर संभाल सके।

यहां कई संभावित परिदृश्य उत्पन्न होते हैं। एक संभावना यह है

कि नीतीश कुमार के पुत्र, निशांत औपचारिक रूप से राजनीति में प्रवेश करें और अंततः उत्तराधिकारी के रूप में उभरें। निशांत की हालिया सार्वजनिक उपस्थिति में वृद्धि इस चर्चा को और बल देती है, और यह उन्हें राजनीतिक क्षेत्र से परिचित कराने का एक सुनियोजित प्रयास प्रतीत होता है। हालांकि, यह मार्ग चुनौतियों से भरा है। राजनीति के प्रति निशांत की पिछली अनिच्छा और नीतीश कुमार द्वारा वंशवादी उत्तराधिकार का विरोध, इस राह में एक बड़ी बाधा है। इसके अलावा, निशांत को उत्तराधिकारी घोषित करने से पार्टी के भीतर असंतोष और विद्रोह हो सकता है, जिससे जदयू में विभाजन का खतरा भी उत्पन्न हो सकता है, क्योंकि वरिष्ठ नेता भाजपा, राजद या कांग्रेस में वैकल्पिक राजनीतिक आश्रय की तलाश कर सकते हैं।

ओडिशा में बीजेडी, तमिलनाडु में एआईएडीएमके और उत्तर प्रदेश में बसपा जैसी उत्तराधिकार संकट का सामना कर रही अन्य क्षेत्रीय पार्टियों के साथ तुलना इस तर्क को मजबूत करती है कि क्षेत्रीय दलों के निरंतर अस्तित्व के लिए एक स्पष्ट उत्तराधिकार आवश्यक है।

हालांकि आंतरिक कलह की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता, निशांत को आगे बढ़ाना जदयू के अस्तित्व के लिए सबसे व्यावहारिक विकल्प साबित हो सकता है। तर्क यह है कि उत्तराधिकार की एक स्पष्ट रेखा, भले ही वह वंशवादी ही क्यों न हो, पार्टी के लिए एक केंद्रीय बिंदु प्रदान करती है और ललन सिंह, अशोक चौधरी या संजय झा जैसे वरिष्ठ नेताओं के बीच एक अराजक सत्ता संघर्ष को रोकती है। एक नामित उत्तराधिकारी के अभाव में, पार्टी एक पतवारविहीन नाव बन सकती है, जो प्रतिद्वंद्वी दलों द्वारा शिकार किए जाने के लिए अतिसंवेदनशील होगी, खासकर भाजपा द्वारा, जो बिहार में अपनी शक्ति को और मजबूत करते हुए जदयू को अपने में समाहित करने का अवसर देख सकती है।

समाजवादी पार्टी (एसपी) के अखिलेश यादव में सहज परिवर्तन और लालू प्रसाद यादव द्वारा तेजस्वी यादव को अपने उप-मुख्यमंत्री के रूप में रणनीतिक रूप से स्थापित करने जैसे उदाहरण इस दिशा में आगे बढ़ने का मार्ग दिखा सकते हैं। सत्ता में होने से संभावित असंतोष को शांत करने और पार्टी की एकता बनाए रखने के लिए कैबिनेट पदों और अन्य प्रोत्साहनों का रणनीतिक उपयोग किया जा सकता है। इसके विपरीत, कांग्रेस पार्टी में सोनिया गांधी द्वारा राहुल गांधी को सत्ता हस्तांतरण का अनुभव, जब पार्टी सत्ता से बाहर थी, आंतरिक कलह और अनुभवी नेताओं को हाशिए पर धकेलने की क्षमता के प्रति एक चेतावनी के रूप में काम करता है।

इसलिए, यदि निशांत को राजनीति में प्रवेश करना है, तो यही सही समय है। यह उन्हें वास्तविक नेता के रूप में स्थापित करेगा और नीतीश को किसी भी संभावित विद्रोह को नियंत्रित करने के

लिए सत्ता का उपयोग करने की अनुमति देगा। हालांकि निशांत की राजनीतिक अनुभव की कमी एक वैध चिंता है, लेकिन जदयू की दीर्घकालिक स्थिरता इस कमी से अधिक महत्वपूर्ण हो सकती है। निशांत को पार्टी की बागडोर सौंपने की यह रणनीतिक चाल, नीतीश कुमार के जाने के बाद पार्टी के भीतर संभावित आंतरिक विस्फोट को प्रभावी ढंग से रोक सकती है।

हालांकि, वैकल्पिक परिदृश्यों को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है। एक नामित उत्तराधिकारी के अभाव में, एक शून्य उत्पन्न हो सकता है, जिससे जदयू के नियंत्रण के लिए एक भयंकर प्रतिस्पर्धा हो सकती है। यह आंतरिक कलह पार्टी को कमजोर कर सकती है और इसे भाजपा द्वारा शत्रुतापूर्ण अधिग्रहण के लिए अतिसंवेदनशील बना सकती है। भाजपा, बिहार में अपना प्रभाव बढ़ाने का अवसर भांपते हुए, सक्रिय रूप से दलबदल को प्रोत्साहित कर सकती है और विलय के लिए दबाव डाल सकती है, जिससे प्रभावी रूप से जदयू का अवशोषण हो सकता है और उसकी स्वतंत्र पहचान खत्म हो सकती है।

इसके अतिरिक्त, यहां पार्टी संबद्धता अक्सर तरल होती है और ऐतिहासिक संदर्भ बताते हैं कि असंतुष्ट जदयू नेताओं को अपनी निष्ठा बदलने में अपेक्षाकृत आसानी होती है, जिससे नीतीश के बाद के युग में पार्टी और अस्थिर हो सकती है।

उत्तराधिकार संकट का सामना कर रही अन्य क्षेत्रीय पार्टियों के साथ तुलना, जैसे ओडिशा में नवीन पटनायक की बीजू जनता दल (बीजद), तमिलनाडु में जयललिता की अखिल भारतीय अन्ना द्रविड़ मुनेत्र कड़गम (अन्नाद्रमुक) और मायावती की बहुजन समाज पार्टी (बसपा), इस तर्क को पुष्ट करती है कि एक स्पष्ट उत्तराधिकार क्षेत्रीय पार्टियों के अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण है। ये पार्टियां, जिनमें या तो एक मजबूत पारिवारिक राजवंश नहीं है या एक अच्छी तरह से परिभाषित उत्तराधिकारी नहीं है, आंतरिक संघर्षों और घटते राजनीतिक भाग्य से जूझ रही हैं।

नीतीश कुमार के बाद जदयू का भविष्य अनिश्चितता के बादल में डूबा हुआ है। हालांकि निशांत कुमार को उत्तराधिकारी के रूप में आगे बढ़ाना एक व्यवहार्य, हालांकि विवादास्पद, समाधान प्रस्तुत करता है, यह जोखिम से मुक्त नहीं है। विद्रोह और आंतरिक विखंडन की संभावना एक महत्वपूर्ण खतरा बनी हुई है। दूसरी ओर, एक स्पष्ट उत्तराधिकारी की अनुपस्थिति से अराजक सत्ता संघर्ष उत्पन्न हो सकता है और अंततः जदयू को भाजपा या अन्य क्षेत्रीय दलों द्वारा अवशोषित किया जा सकता है। आने वाले महीने जदयू के भाग्य का निर्धारण करने में महत्वपूर्ण होंगे। नीतीश कुमार की उत्तराधिकार योजना की जटिलताओं को सुलझाने और साथ ही आगामी चुनावों में जीत हासिल करने की क्षमता अंततः यह निर्धारित करेगी कि जदयू आंतरिक विस्फोट का सामना करता है या नए युग के लिए खुद को पुनर्गठित करने में सफल होता है।

पार्टी का भविष्य वंशवादी उत्तराधिकार, पार्टी एकता और बिहार के लगातार बदलते राजनीतिक परिदृश्य के बीच एक नाजुक संतुलन पर टिका हुआ है।

भू-राजनीति का नया मोड़ क्या टूट रहा है ट्रांस-अटलांटिक गठबंधन?

रेचल रिज़ो

क्या ट्रंप का दूसरा कार्यकाल अमेरिका और यूरोप के बीच पुराने गठजोड़ को हमेशा के लिए बदल देगा? रेचल रिज़ो के विश्लेषण में जानिए, कैसे अब यूरोप को अपनी सुरक्षा और विदेश नीति की बागडोर खुद संभालने पर मजबूर होना पड़ रहा है।

डोनाल्ड ट्रंप, जिन्हें विवादों का पर्याय माना जाता है, उन्होंने फरवरी 2024 में दक्षिण कैरोलिना में एक चुनावी रैली के दौरान एक ऐसा बयान दिया, जिसने अमेरिका और यूरोप के राजनीतिक गलियारों में भूचाल ला दिया। उन्होंने एक "बड़े यूरोपीय देश" के राष्ट्रपति के साथ हुई अपनी बातचीत का ज़िक्र करते हुए कहा कि अगर वह देश नाटो में अपने हिस्से की राशि नहीं चुकाता है, तो अमेरिका उसकी रक्षा नहीं करेगा। इतना ही नहीं, ट्रंप ने ये भी कहा कि वह रूस के राष्ट्रपति पुतिन को नाटो के उन देशों के ख़िलाफ़ "जो कुछ भी वो चाहता है" करने के लिए प्रोत्साहित करेंगे, जो "अपने बिल नहीं चुकाते" हैं।

इस बयान ने तत्काल ही अमेरिका और यूरोप के बीच अविश्वास की खाई को और गहरा कर दिया। राष्ट्रपति बाइडेन और यूरोपीय नेताओं ने इसे ट्रंप के संभावित दूसरे कार्यकाल में ट्रांस-अटलांटिक संबंधों के पूरी तरह से टूट जाने के संकेत के रूप में देखा। हालांकि इस डर को बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया गया हो सकता है, लेकिन ट्रंप के दूसरे कार्यकाल की नीतियों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि अमेरिका और यूरोप के संबंधों में कुछ बड़े बदलाव आने वाले हैं। ट्रंप और उनकी टीम अमेरिका-यूरोप संबंधों को नए नियमों और अपेक्षाओं के तहत आधारभूत बदलाव लाने और नया आकार देने के लिए तैयार हैं।

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति और शीत युद्ध के अंत के बाद अमेरिका और यूरोप ने घनिष्ठ सहयोग के तहत काम किया। यूरोपीय देश यह मानते रहे कि उनकी सुरक्षा की अंतिम गारंटी अमेरिका की है। अमेरिका की सुरक्षा गारंटियों और यूरोपीय महाद्वीप पर उसकी सैन्य उपस्थिति ने न केवल अमेरिका को रूस का मुकाबला करने में सक्षम बनाया, बल्कि उसे दुनिया भर में खुद को एक महाशक्ति के रूप में स्थापित करने में भी मदद की। हालांकि, इसने यूरोप को किसी भी खतरे से निपटने की प्रतिरोधक क्षमता दी, लेकिन साथ ही अमेरिका को भी यह फायदा हुआ कि यूरोप की विदेश नीति पर उसका काफी असर बना रहा।

ट्रांस-अटलांटिक नेताओं की नजरों में यह अनुबंध अब तक सफल रहा है। यूरोप के देश अमेरिका के साथ लोकतांत्रिक मूल्यों को साझा करते हैं। यूरोपीय संघ, अमेरिका का सबसे बड़ा द्विपक्षीय व्यापार और निवेश भागीदार है। अमेरिका को एक 'उदार अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था' का प्रबंधन करने में यूरोप मदद करता है। इस लिहाज से देखें तो यूरोप को अमेरिका द्वारा दी जा रही सुरक्षा की गारंटी इन सब कामों की एक छोटी सी कीमत है।

लेकिन डोनाल्ड ट्रंप और उनके प्रशासन में काम करने वाले लोगों ने अब इसे देखने का नजरिया बदल दिया है। यही लोग अब अमेरिका की प्राथमिकताएं तय कर रहे हैं। उनकी इस सोच

से ही यह समझा जा सकता है कि ट्रंप के दूसरे कार्यकाल के दौरान अमेरिका-यूरोप संबंध कैसे विकसित हो सकते हैं। ट्रंप के सहयोगियों के मुताबिक, अमेरिका ने यूरोप को काफी लाड़-प्यार दिया है। पिछले 35 सालों में यूरोप को लेकर अमेरिका का रवैया बहुत नरम रहा है और यूरोपीय देशों को इसका एकतरफा फायदा मिलता रहा है। यूरोप की सुरक्षा पर अमेरिका बहुत खर्च करता है और इसकी वजह से अमेरिका दूसरी जगहों पर अपनी शक्ति नहीं दिखा पा रहा, जबकि यूरोपीय देशों को अमेरिकी गारंटी की वजह से अपनी सुरक्षा पर ज़्यादा खर्च नहीं करना पड़ता। इन बचे हुए पैसों को यूरोप के देश अपने सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों पर खर्च करते हैं।

यूरोपीय देशों को अब यह उम्मीद नहीं रखनी चाहिए कि ट्रंप के दूसरे कार्यकाल में भी अमेरिका और यूरोप के रिश्ते पहले की तरह बने रहेंगे। फरवरी में नाटो की अपनी पहली यात्रा के दौरान अमेरिकी रक्षा सचिव पीट हेगसेथ ने दो-टूक शब्दों में यह बात स्पष्ट कर दी थी। उन्होंने अपने यूरोपीय सहयोगियों से कहा कि वह "सीधे और स्पष्ट रूप से यह बात कहने यहां आए हैं कि कुछ कठोर रणनीतिक वास्तविकताएं अमेरिका को मुख्य रूप से यूरोप की सुरक्षा पर ध्यान केंद्रित करने से रोकती हैं।" उन्होंने यह भी कहा कि अपनी सुरक्षा के लिए "यूरोपीय देशों को आगे आकर नेतृत्व करना चाहिए।" अमेरिका के इस संदेश ने यूरोपीय देशों को हैरान कर दिया, लेकिन यह विचार नया नहीं है। ड्वाइट डी. आइजनहॉवर और उनसे पहले के अमेरिकी राष्ट्रपति भी यह शिकायत करते रहे हैं कि यूरोप को अमेरिका की पीठ पर सवारी करने की आदत पड़ गई है।

अब बड़ा सवाल यह है कि इन सब बदलावों को वास्तविकता का जामा पहनाकर ट्रांस-अटलांटिक संबंधों को कैसे सुधारा जाए। ट्रंप के दूसरे कार्यकाल के दौरान यूरोपीय देशों को इस बात के लिए तैयार रहना चाहिए कि यूरोप की सुरक्षा के लिए अमेरिकी समर्थन में थोड़ी कमी आएगी। यूरोपीय महाद्वीप में अमेरिकी सैनिकों की मौजूदगी में भी कमी आ सकती है। ट्रंप ने पहले ही कहा था कि वह यूरोप में अमेरिकी सैनिकों की संख्या में कमी लाकर इसे 20 हज़ार तक करना चाहते हैं। इतना ही नहीं, ट्रंप ने यह भी कहा

फाइल फोटो

अब बड़ा सवाल यह है कि इन बदलावों को वास्तविकता का लबादा कैसे पहनाया जाए और ट्रांसअटलांटिक संबंधों को कैसे बेहतर बनाया जाए। ट्रम्प के दूसरे कार्यकाल के दौरान, यूरोपीय देशों को यूरोप की सुरक्षा के लिए अमेरिकी समर्थन में थोड़ी कमी के लिए तैयार रहना होगा।

कि वह यूरोप में तैनात बाकी बचे सैनिकों के लिए भी अपने यूरोपीय सहयोगियों से सब्सिडी की मांग करना चाहते हैं।

रक्षा और सुरक्षा के अलावा अमेरिका और यूरोप में राजनीतिक परिदृश्य भी अलग-अलग मानदंडों और मूल्यों के दबाव में दरकने लगा है। अमेरिका के उप राष्ट्रपति जेडी. वेंस ने फरवरी में म्यूनिख सुरक्षा सम्मेलन में अपने भाषण के दौरान इसे स्पष्ट शब्दों में जाहिर भी कर दिया। वेंस के मुताबिक, ट्रंप की टीम का मानना है कि यूरोप का खतरा आंतरिक है। उन्होंने यूरोप पर उन पारंपरिक लोकतांत्रिक मूल्यों से पीछे हटने का आरोप लगाया, जो ऐतिहासिक रूप से अमेरिका के साथ साझा थे। इसमें मुख्य रूप से स्वतंत्र अभिव्यक्ति, धार्मिक स्वतंत्रता और माइग्रेशन का मुद्दा शामिल है।

इसका एक मतलब यह भी है कि यूरोप के प्रति ट्रंप अब एक अत्यधिक व्यापारिक दृष्टिकोण अपनाएं, विशेष रूप से उन देशों के साथ जो राजनीतिक रूप से उनके साथ नहीं हैं। चीन पर यूरोप की आर्थिक निर्भरता के मामले में ट्रंप का यह रुख स्पष्ट रूप से दिख सकता है। ट्रंप और उनकी टीम का मानना है कि यूरोप के मामले में चीन दोनों तरफ का फायदा उठाता है। चीन की यूरोपीय बाजारों और उसके महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचे तक सीधी पहुंच है। इससे चीन को अपनी वैश्विक आर्थिक महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने की ताकत मिलती है। हालांकि यह भविष्यवाणी करना मुश्किल है कि इसके दूरगामी परिणाम क्या होंगे, लेकिन इतना तय है कि यूरोपीय संघ (और विभिन्न यूरोपीय देशों) को अगले चार सालों तक चीन नीति के संबंध में अमेरिका के दबाव का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। इस दौरान यूरोप को ऐसा महसूस हो सकता है कि उसे एक पक्ष चुनने के लिए मजबूर किया जा रहा है। चीन नीति को लेकर यूरोप के देशों का नजरिया पहले से ही खंडित है, ऐसे में अमेरिका का दबाव पहले से ही टूटे हुए इस दृष्टिकोण को और कमजोर कर सकता है।

ट्रंप के दूसरे कार्यकाल के शुरुआती महीनों ने ही ट्रांस-अटलांटिक साझेदारी को संकट में डाल दिया है। म्यूनिख सुरक्षा सम्मेलन में अमेरिकी नेताओं ने यूरोप को जो कड़े संदेश दिए, उससे ये देश हैरान हैं। हालांकि उन्हें इसे लेकर आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए था। 2020 में राष्ट्रपति बनने के बाद जब बाइडेन ने "अमेरिका इज बैक" का नारा दिया था, उसी समय यूरोपीय देशों को इसके निहितार्थ समझ लेने चाहिए थे।

यूरोप एक बार फिर से पहले की स्थिति में आ गया है। यूरोपीय देश अब यह समझने की कोशिश कर रहे हैं कि अगले चार सालों तक उन्हें अमेरिका के साथ कैसे निपटना है। ट्रंप और उनकी टीम 80 वर्षों के ऐतिहासिक परिपाटी को नए सिरे से गढ़ने की कोशिश कर रही है। हालांकि मौजूदा सूरत में यह कहा जा सकता है कि अमेरिका और यूरोप के संबंध कायम रहेंगे, लेकिन इन संबंधों में कुछ मौलिक बदलाव हो सकते हैं। अब यूरोप को अपने पैरों पर खड़ा होने की तैयारी करनी होगी। क्या यूरोप इस चुनौती का सामना करने के लिए तैयार है? क्या वह अपनी सुरक्षा और विदेश नीति की बागडोर अपने हाथों में ले पाएगा? ये सवाल आने वाले सालों में भू-राजनीति को आकार देंगे।

(लेखिका रेचल रिज़ो, अटलांटिक काउंसिल के यूरोप सेंटर में नॉन रेज़िडेंट सीनियर फेलो हैं।)

तिब्बत पर प्रभुत्व स्थापित करने की चीन की रणनीति

मनोज कुमार

दलाई लामा के पुनर्जन्म प्रक्रिया का नियंत्रण चीन द्वारा उठाया गया एक रणनीतिक कदम है, जिसका उद्देश्य तिब्बत पर अपने प्रभाव को मजबूत करना और तिब्बती बौद्ध धर्म के भविष्य को आकार देना है। यह मुद्दा तिब्बत में राजनीतिक नियंत्रण बनाए रखने के लिए बीजिंग के व्यापक प्रयासों में एक महत्वपूर्ण बिंदु बन गया है, और इसके महत्व को केवल दलाई लामा संस्था के गहन सांस्कृतिक, धार्मिक और राजनीतिक वजन की खोज करके ही समझा जा सकता है।

दलाई लामा दुनिया भर के तिब्बतियों के लिए एक आध्यात्मिक नेता और एक राजनीतिक प्रतीक दोनों के रूप में एक अनूठी स्थिति रखते हैं। सदियों से, दलाई लामा ने न केवल तिब्बती बौद्ध समुदाय का मार्गदर्शन किया है, बल्कि तिब्बत के लिए राष्ट्रीय एकता के प्रतीक के रूप में भी काम किया है। 14वें दलाई लामा, तेनजिन ग्यात्सो ने, तिब्बती स्वायत्तता की वकालत करने और तिब्बत की अनूठी संस्कृति और पहचान को संरक्षित करने के लिए अपने अंतरराष्ट्रीय मंच का उपयोग किया है, अक्सर चीन के तिब्बत को पूरी तरह से चीनी राज्य में एकीकृत करने के प्रयासों का विरोध किया है। उनकी वैश्विक प्रतिष्ठा ने उन्हें न केवल तिब्बती समाज के भीतर, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी एक महत्वपूर्ण व्यक्ति बना दिया है, जो अक्सर उन्हें चीन के तिब्बत को चीन का अभिन्न अंग मानने की दृष्टि के साथ संघर्ष में डालता है।

चीन दलाई लामा के प्रभाव को, विशेष रूप से तिब्बती प्रवासी और तिब्बत के भीतर, अपने नियंत्रण के लिए एक खतरे के रूप में देखता है। इसलिए, चीनी सरकार ने अगले दलाई लामा के चयन प्रक्रिया पर अपना नियंत्रण स्थापित करने के लिए कदम उठाए हैं। यह सिर्फ धार्मिक मामलों का प्रबंधन करने के बारे में नहीं है, बल्कि तिब्बत के राजनीतिक और सांस्कृतिक एकीकरण को चीन में सुनिश्चित करने के लिए एक जानबूझकर उठाया गया कदम है। पुनर्जन्म प्रक्रिया की देखरेख करके, बीजिंग किसी भी भविष्य के दलाई लामा की चीनी राज्य के अधिकार को चुनौती देने की क्षमता को कम करने का लक्ष्य रखता है।

बीजिंग ने ऐतिहासिक मिसालों, विशेष रूप से तिब्बती मामलों पर किंग राजवंश के प्रभाव का उल्लेख करके पुनर्जन्म प्रक्रिया में अपनी भागीदारी को सही ठहराया है। जबकि इन दावों की ऐतिहासिक वैधता बहस का विषय है, चीन का इरादा स्पष्ट हैः पुनर्जन्म प्रक्रिया को नियंत्रित करने से उसे तिब्बती बौद्ध धर्म के आध्यात्मिक नेतृत्व

दलाई लामा के पुनर्जन्म को नियंत्रित करने की चीन की रणनीति के अंतरराष्ट्रीय निहितार्थ भी हैं। कई राष्ट्रों, विशेष रूप से पश्चिमी लोकतंत्रों द्वारा, दलाई लामा को लंबे समय से शांतिपूर्ण प्रतिरोध और मानवाधिकारों के प्रतीक के रूप में माना जाता रहा है।

को निर्देशित करने की अनुमति मिलती है। यदि बीजिंग राज्य द्वारा अनुमोदित दलाई लामा को स्थापित करने में सफल हो जाता है, तो चीनी सरकार प्रभावी रूप से किसी भी विरोध को बेअसर कर सकती है जो एक नया दलाई लामा पैदा कर सकता है, जिससे धार्मिक व्यक्ति चीन समर्थक आवाज में बदल जाएगा।

यह कदम घरेलू और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर धारणाओं को आकार देने की व्यापक रणनीति में भी भूमिका निभाता है। चीनी राज्य द्वारा समर्थित दलाई लामा संभवतः बीजिंग के आख्यानों को बढ़ावा देगा, तिब्बती बौद्ध धर्म को चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (सीसीपी) की नीतियों और लक्ष्यों के साथ जोड़ देगा। इस तरह के परिदृश्य से तिब्बती निर्वासन समुदायों के प्रभाव को कम किया जा सकता है और तिब्बती स्वायत्तता या स्वतंत्रता की वकालत करने वाले आंदोलनों के लिए समर्थन कमजोर हो सकता है। इसके अतिरिक्त, यह राज्य द्वारा नियुक्त व्यक्ति तिब्बती समुदाय के भीतर असंतुष्ट आवाजों की वैधता को कमजोर कर सकता है।

दलाई लामा के पुनर्जन्म को नियंत्रित करने की चीन की रणनीति के अंतरराष्ट्रीय निहितार्थ भी हैं। दलाई लामा को लंबे समय से कई राष्ट्रों, विशेष रूप से पश्चिमी लोकतंत्रों द्वारा, शांतिपूर्ण प्रतिरोध और मानवाधिकारों के प्रतीक के रूप में माना जाता रहा है। उनकी वैश्विक उपस्थिति तिब्बती मुद्दे को सुर्खियों में रखती है, जिससे चीन के क्षेत्र पर दावों को चुनौती मिलती है। पुनर्जन्म को नियंत्रित करके, बीजिंग यह संदेश देना चाहता है कि तिब्बती मुद्दा हल हो गया है, संभावित रूप से अंतरराष्ट्रीय कूटनीति और मानवाधिकार वकालत में दलाई लामा की भूमिका को कम करता है।

यह दृष्टिकोण धर्म के प्रबंधन के प्रति चीन की व्यापक नीति में फिट बैठता है। CCP ने ऐतिहासिक रूप से यह सुनिश्चित करने की कोशिश की है कि धार्मिक नेतृत्व राज्य विचारधारा के साथ संरेखित हो, चाहे वह कैथोलिक समुदायों में CCP- संरेखित बिशपों की नियुक्ति करके या अन्य धार्मिक संस्थानों को प्रभावित करके। दलाई लामा के पुनर्जन्म प्रक्रिया को नियंत्रित करके, चीन इस नीति को तिब्बती बौद्ध धर्म तक विस्तारित कर रहा है, इसे उस चीज के साथ संरेखित कर रहा है जिसे राज्य ₹समाजवादी मूल्य₹ कहता है।

हालांकि, यह रणनीति जोखिमों से रहित नहीं है। तिब्बती समुदाय, तिब्बत के अंदर और बाहर दोनों जगह, चीनी राज्य द्वारा नियुक्त दलाई लामा को खारिज कर सकते हैं, जिससे तिब्बती समाज में गहरा विभाजन हो सकता है। दो दलाई लामा होने की संभावना-एक निर्वासन में और एक तिब्बत में राज्य द्वारा नियुक्त-तिब्बती बौद्ध धर्म के भीतर एक विभाजन पैदा कर सकता है, जिससे संस्था ही कमजोर हो सकती है। इसके बीजिंग के क्षेत्र पर नियंत्रण के लिए अनपेक्षित परिणाम हो सकते हैं और संभावित रूप से तिब्बती प्रतिरोध को तेज कर सकते हैं।

चीन के लिए, दलाई लामा के पुनर्जन्म को नियंत्रित करना तिब्बत पर प्रभुत्व स्थापित करने की अपनी व्यापक योजना का एक महत्वपूर्ण तत्व है। इस प्रक्रिया का लाभ उठाकर, बीजिंग को अपनी राजनीतिक नियंत्रण को मजबूत करने, तिब्बती बौद्ध धर्म को राज्य के हितों के साथ संरेखित करने और तिब्बती कारण के अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव को कम करने की उम्मीद है। हालांकि, इस रणनीति में महत्वपूर्ण जोखिम हैं, क्योंकि यह तिब्बती लोगों की गहरी आध्यात्मिक मान्यताओं को सीधे चुनौती देती है और उन लोगों को और अलग कर सकती है जिन पर वह शासन करना चाहता है। चीन की रणनीति लंबी अवधि में सफल होगी या नहीं, यह देखा जाना बाकी है, लेकिन तिब्बत और वैश्विक भू-राजनीति पर इसका प्रभाव निर्विवाद है।

क्या बन रहा है एक और नया एशियाई गुट?

जॉर्ज फ्रीडमैन

चीन, दक्षिण कोरिया और जापान के वरिष्ठ अधिकारी जल्द ही टोक्यो में एक अधिक औपचारिक संबंध स्थापित करने के लिए मिलेंगे, जिसमें सुरक्षा और आर्थिक लाभ शामिल होंगे। चीन और जापान के बीच पहले से ही अनौपचारिक वार्ता हो चुकी है, इसलिए ऐसा लगता है कि दोनों देशों को सैद्धांतिक रूप से अगले स्तर पर आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त सहमति मिल गई है। व्यवहार में, यह स्पष्ट नहीं है कि एक साझेदारी का क्या अर्थ है। जापान ने कहा है कि वह चीन को कृषि निर्यात बढ़ाना चाहता है और उत्तर कोरिया को अपने परमाणु कार्यक्रम को छोड़ने के लिए मजबूर करना चाहता है। स्वाभाविक रूप से, बाद वाले बिंदु ने दक्षिण कोरिया को वार्ता में शामिल किया।

बीजिंग एक खतरनाक भू-राजनीतिक स्थिति में है। उभरता हुआ अमेरिका-रूस गठबंधन चीन को एक अलग-थलग स्थिति में छोड़ देता है, ऐसे समय में जब उसकी अर्थव्यवस्था नाटकीय रूप से कमजोर हो गई है। दिखावे के विपरीत, रूस और चीन कभी भी सही मायने में एकजुट नहीं रहे हैं। रूस पूरे इतिहास में चीन के लिए खतरा रहा है, और उनके बीच कई युद्ध लड़े गए हैं। यहां तक कि साम्यवाद की समानता भी उन्हें एकजुट नहीं कर सकी। माओ के अधीन, चीन रूस के प्रति पूरी तरह से शत्रुतापूर्ण था, जिस पर उसने ख्रुश्चेव युग के दौरान साम्यवाद के साथ विश्वासघात करने का आरोप लगाया था।

भू-राजनीतिक रूप से, माओ को चिंता थी कि अमेरिका-रूस के बीच तनाव कम

제9차 한·일·중 정상회의
The Ninth Trilateral Summit Meeting
among
the Republic of Korea, Japan and the People's Republic of China
May 27, 2024
Seoul, Korea

फाइल फोटो

होना चीन के खिलाफ एक संयुक्त नीति की प्रस्तावना होगा। इसलिए जब हेनरी किसिंजर 1970 के दशक में चीन के साथ संबंध खोलने के लिए चीन गए, तो रूस-चीन सीमा पर भारी लड़ाई छिड़ गई - एक महत्वपूर्ण विवाद जो कई महीनों तक चला। रूस का इरादा हमले को चीन के लिए एक चेतावनी के रूप में पेश करना था कि अगर अमेरिका के साथ उसके संबंध रूसी हितों को खतरे में डालते हैं तो क्या हो सकता है। चीन ने इसे इसी रूप में समझा।

चीन ने इसके तुरंत बाद संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ राजनयिक संबंध खोले, जो चीन के वैश्विक शक्ति के रूप में उभरने के लिए महत्वपूर्ण साबित हुआ। माओ की मृत्यु के समय चीनी अर्थव्यवस्था खस्ताहाल थी। उनके उत्तराधिकारी, देंग शियाओपिंग ने सुधारों की एक श्रृंखला पारित की जिसने चीनी अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित किया, जिसका श्रेय आंशिक रूप से अमेरिका को जाता है, जिसने पहले चीनी उत्पादों को अपने विशाल बाजार में प्रवेश करने की अनुमति दी और बाद में चीनी उद्योग में भारी निवेश किया।

रूस और अमेरिका से दोहरा खतरा चीन को अस्थिर स्थिति में डाल देगा, और संभावित सुलह की सीमा अज्ञात होने के कारण, चीन को तेजी से कार्रवाई करनी होगी। इसके बाद चीन की एशियाई सुरक्षा और आर्थिक गुट बनाने की पहल हुई।

समस्या यह थी कि यह एक टिकाऊ प्रक्रिया नहीं थी। चीन के उल्कापिंड जैसी वृद्धि के साथ सैन्य शक्ति में भी वृद्धि हुई। और राष्ट्रपति शी जिनपिंग के तहत, अमेरिका के प्रति चीन की बयानबाजी अर्थव्यवस्था जितनी खराब होती है, उतनी ही शत्रुतापूर्ण होती जाती है। इस वाक्पटु शत्रुता, पोस्ट-कोविड -19 आर्थिक गिरावट के साथ मिलकर, चीन में अमेरिकी निवेश के स्तर में गिरावट आई है, साथ ही पूंजी पलायन भी हुआ है, जिसने बैंकिंग और आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण रियल एस्टेट उद्योग में संकट

पैदा कर दिया है। इस बीच, रूस के साथ चीन के संबंध ज्यादातर समान रहे। उसने मास्को को खतरे के रूप में नहीं देखा, लेकिन उसने उसे आर्थिक मुक्तिदाता के रूप में भी नहीं देखा। यूक्रेन युद्ध पर चीन के रुख को सख्ती से तटस्थ बताया जा सकता है; आक्रमण के बाद रूस का साथ देने के बजाय, उसने निंदा करने के लिए संयुक्त राष्ट्र के मतदान से परहेज किया। चीन ने रूस को हथियार बेचे लेकिन कभी भी सैनिकों को तैनात नहीं किया।

यह संभव है कि यह यथास्थिति बदल जाए। चीन के लिए, अमेरिका और रूस के बीच सुलह की संभावना भी एक दुःस्वप्न है। रूस और अमेरिका से दोतरफा खतरा चीन को एक अस्थिर स्थिति में डाल देगा, और क्योंकि संभावित सुलह की सीमा अज्ञात है, चीन को तेजी से कार्य करना होगा। इसके बाद एक एशियाई सुरक्षा और आर्थिक गुट बनाने की चीनी पहल हुई।

जापान और दक्षिण कोरिया अमेरिका के सैन्य सहयोगी हैं, और दोनों पक्ष व्यवस्था बनाए रखना चाहते हैं। चीन ताइवान पर आक्रमण करने के अपने झांसे को छोड़ने सहित अपनी सैन्य मुद्रा को छोड़े बिना जापान और दक्षिण कोरिया के साथ गुट में शामिल नहीं हो सकता है। लेकिन अमेरिका-रूस के संभावित समझौते के साथ, चीन का भविष्य अनिश्चित हो जाता है, और संयुक्त राज्य अमेरिका के दो सबसे करीबी सहयोगियों के साथ सुरक्षा संबंध में रहना चीन को बिना सुरक्षा संबंध के रहने की तुलना में कहीं अधिक सुरक्षित बना सकता है। और यह उन आर्थिक अवसरों के बारे में कुछ नहीं कहना है जो चीन को उसके नए भागीदारों से उपलब्ध होंगे।

मैंने लगातार लिखा है कि, अपनी विशाल सेना के बावजूद, चीन अमेरिका के लिए बहुत बड़ा सैन्य खतरा नहीं है। (अब तक, मैं सही रहा हूं।) और एक औपचारिक एशियाई समूह चीन पर अमेरिकी रुख को नरम कर सकता है। इसलिए जब तक दक्षिण कोरिया और जापान पूरी तरह से अमेरिका से नाता नहीं तोड़ना चाहते हैं और अपनी रक्षा के लिए पूरी तरह से चीन पर निर्भर नहीं होना चाहते हैं, अमेरिका को खोने के लिए कुछ भी नहीं है। सबसे अच्छी स्थिति में, जापान और दक्षिण कोरिया चीन पर मध्यम प्रभाव डाल सकते हैं, क्योंकि अमेरिका को चुनौती देने से दोनों देशों को खतरा होगा।

बता दें, चीनी प्रधान मंत्री ली कियांग, जो दो वर्षों से अमेरिकी व्यापारिक नेताओं से नहीं मिले थे, ने अमेरिकी सीनेटर स्टीव डाइन्स के नेतृत्व में बोइंग, क्वालकॉम, फाइजर और कारगिल के प्रमुखों सहित एक प्रतिनिधिमंडल के साथ मुलाकात की। उन्होंने किसी अन्य देश के कॉर्पोरेट प्रमुखों के साथ मुलाकात नहीं की। डाइन्स, जो ट्रम्प के करीबी सहयोगी हैं, सीनेट की विदेश संबंध समिति में हैं और उन्होंने चीन में व्यापक कारोबार किया है। यह बैठक अमेरिकी शुल्कों पर चीन के डर से प्रेरित हो सकती है, या यह एक संकेत हो सकता है कि जापान और दक्षिण कोरिया एक स्थानीय व्यवस्था बनाने से कम प्रेरित हैं और संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ एक अलग संबंध में जाने से अधिक प्रेरित हैं।

निश्चित रूप से, टोक्यो में बैठक से कुछ भी नहीं निकल सकता है। अमेरिका और उसके एशियाई सहयोगियों के बीच तनाव हैः जापान ने सैन्य खर्च बढ़ाने की अमेरिकी मांगों का विरोध किया है, और दक्षिण कोरिया को "संवेदनशील राष्ट्र" - यानी, परमाणु हथियार विकास में लगे राष्ट्र - नामित करने पर नाराजगी है। और राजनयिक कार्रवाई सिर्फ इशारा है। फिर भी, इशारों के भी महत्वपूर्ण अर्थ हो सकते हैं। इस मामले में, वे सुझाव देते हैं कि चीन को अपनी भू-राजनीतिक अनिवार्यताओं पर पुनर्विचार करने और अमेरिका के करीब जाने के लिए मजबूर किया गया है। किसी भी तरह से, यह इस बात का और सबूत है कि एक अप्रतिबंधित दुनिया में, देश एक लंगर की तलाश कर रहे हैं।

जॉर्ज फ्रीडमैन अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त भू-राजनीतिक पूर्वानुमानकर्ता और अंतर्राष्ट्रीय मामलों के रणनीतिकार और 'जियोपॉलिटिकल फ्यूचर' के संस्थापक और अध्यक्ष हैं।

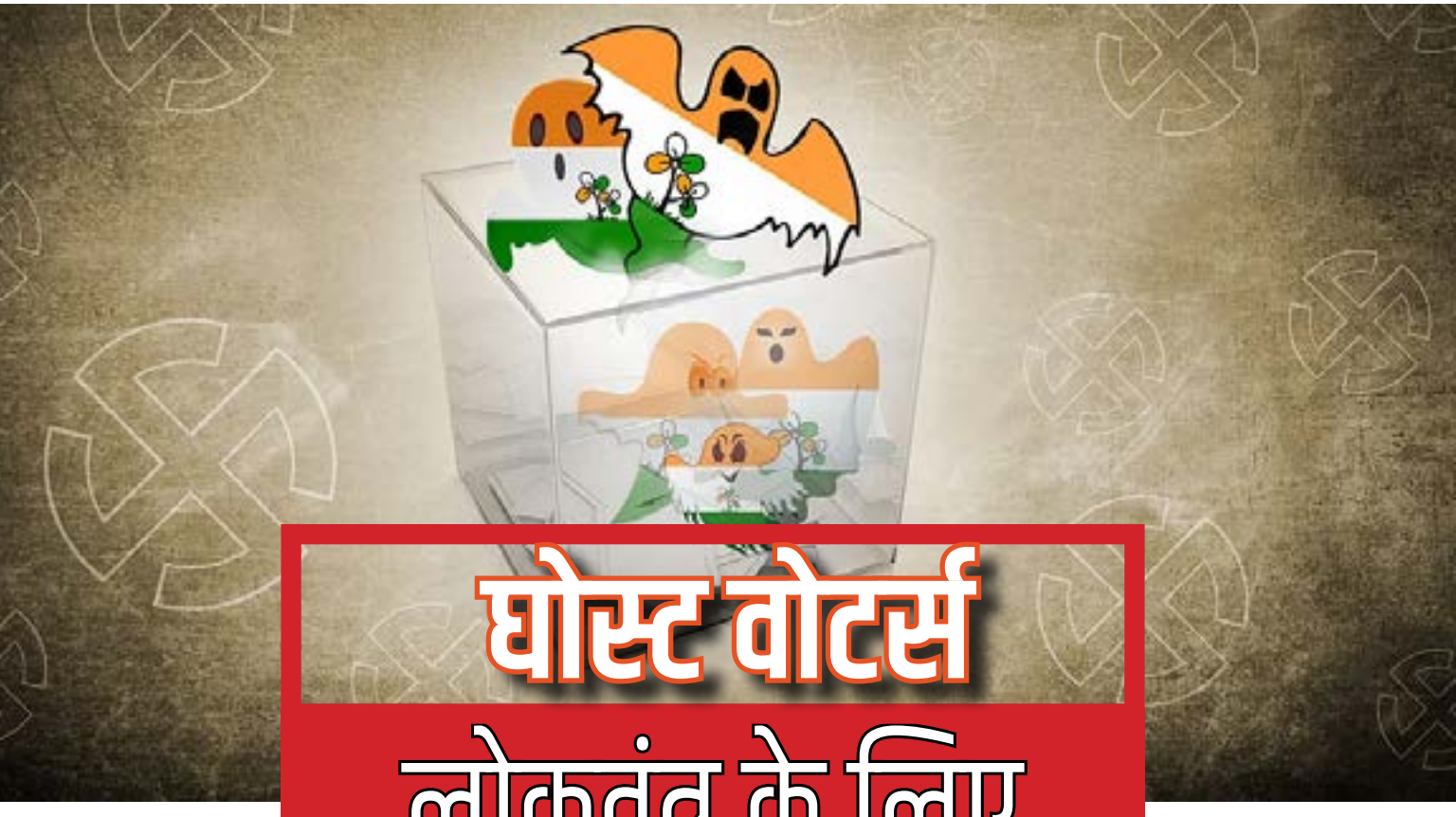

घोस्ट वोटर्स लोकतंत्र के लिए बड़ा खतरा

कुमार संतोष

चुनावी प्रणाली में मतदाता सूची की प्रामाणिकता लोकतंत्र की नींव है। पश्चिम बंगाल में 'घोस्ट वोटर्स' के हालिया विवाद ने इस प्रक्रिया की पारदर्शिता और विश्वसनीयता पर गंभीर सवाल खड़े किए हैं। यह लेख इस मुद्दे की गहराई से जांच करता है, चुनावी प्रक्रिया में मौजूद संरचनात्मक कमियों, राजनीतिक दलों की भूमिका और इसके संभावित परिणामों का विश्लेषण करता है।

हाल के वर्षों में, पश्चिम बंगाल में मतदाता सूची में 'घोस्ट वोटर्स' (भूत मतदाता) का मुद्दा राजनीतिक बहस का केंद्र बन गया है। राज्य में 7.6 करोड़ मतदाताओं में से, राजनीतिक दलों ने डुप्लिकेट इलेक्ट्रॉनिक फोटो पहचान पत्र (ईपीआईसी) और जनसांख्यिकी रूप से समान प्रविष्टियों (डीएसई) के मामलों को उजागर किया है। इन विसंगतियों को लेकर आरोप-प्रत्यारोप का दौर जारी है, जिसमें राजनीतिक दल एक-दूसरे पर मतदाता सूची में हेरफेर करने का आरोप लगा रहे हैं। हालांकि यह विवाद पश्चिम बंगाल में अधिक चर्चित हुआ है, लेकिन यह समस्या पूरे भारत में फैली हुई है, जो चुनावी प्रक्रिया की प्रामाणिकता पर गंभीर सवाल

खड़े करती है। भारतीय चुनावी प्रणाली में, मतदाता सूची को अपडेट करने और त्रुटियों को दूर करने की जिम्मेदारी निर्वाचन आयोग (ईसीआई) की होती है। इस प्रक्रिया में, राज्य सरकार के कर्मचारी निर्वाचन पंजीकरण अधिकारी (ईआरओ) के रूप में प्रत्येक विधानसभा क्षेत्र में तैनात किए जाते हैं। ईआरओ, बूथ लेवल अधिकारियों (बीएलओ) को भेजते हैं, जो आमतौर पर आंगनवाड़ी कार्यकर्ता होते हैं, ताकि वे मौजूदा मतदाताओं का भौतिक सत्यापन कर सकें और मृत या स्थानांतरित हो चुके लोगों के नाम हटा सकें।

हालांकि, इस प्रक्रिया में कई कमज़ोरियाँ हैं। बीएलओ अक्सर स्थानीय राजनीतिक दलों के दबाव में काम करते हैं, जिससे निष्पक्षता और पारदर्शिता प्रभावित होती है। इसके अलावा, दूरदराज और दुर्गम क्षेत्रों में भौतिक सत्यापन करना मुश्किल होता है, जिससे फर्ज़ी मतदाताओं के नाम मतदाता सूची में बने रहने की संभावना बढ़ जाती है।

राजनीतिक दलों को भी मतदाता सूची को स्कैन करने और किसी भी तरह की गड़बड़ी की रिपोर्ट करने के लिए ब्लॉक लेवल एजेंट (बीएलए) नामक पार्टी कार्यकर्ताओं को तैनात करने का अधिकार है। हालांकि, अक्सर बीएलए अपने राजनीतिक हितों को साधने के लिए जानबूझकर गलत जानकारी देते हैं, जिससे मतदाता सूची में हेरफेर की संभावना बढ़ जाती है।

चुनाव आयोग के सामने आने वाली एक और बड़ी चुनौती जनसांख्यिकी रूप से समान प्रविष्टियाँ (डीएसई) हैं। डीएसई तब होते हैं जब दो वास्तविक मतदाताओं के नाम, पिता का नाम और यहां तक कि उनकी ईपीआईसी पर एक ही उम्र होती है। ऐसे मामलों में, असली और फर्ज़ी मतदाताओं के बीच अंतर करना मुश्किल हो जाता है, जिससे फर्ज़ी मतदाताओं के लिए मतदाता सूची में बने रहना आसान हो जाता है।

इसके अलावा, फोटोग्राफिक रूप से समान प्रविष्टियाँ (पीएसई) भी एक गंभीर समस्या हैं। पीएसई तब होते हैं जब दो अलग-अलग मतदाताओं की तस्वीरों में समानता होती है, जिससे यह पहचानना मुश्किल हो जाता है कि क्या कोई फर्ज़ी मतदाता है।

हाल के वर्षों में, चुनाव आयोग ने मतदाता सूची से लाखों फर्ज़ी नामों को हटाने के लिए अभियान चलाया है। 2022 में, पूरे देश में 10 मिलियन डुप्लिकेट एंट्री को हटाया या ठीक किया गया था। हालांकि, यह समस्या का सिर्फ एक हिस्सा है। कई फर्ज़ी मतदाता अभी भी मतदाता सूची में बने हुए हैं, जिससे चुनावी प्रक्रिया की विश्वसनीयता पर सवाल उठते हैं।

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़ों के अनुसार, 2014 से 2022 के बीच चुनावी अपराधों में 400% से अधिक की वृद्धि हुई है। इन अपराधों में मतदाता सूची में फर्ज़ी नामों को शामिल करना, मतदाता पहचान पत्रों में हेरफेर करना और मतदान केंद्रों पर गड़बड़ी करना शामिल है।

घोस्ट वोटर्स का मुद्दा भारतीय लोकतंत्र के लिए गंभीर खतरा है। फर्ज़ी मतदाताओं की मौजूदगी से चुनावी परिणाम प्रभावित हो सकते हैं, जिससे जनादेश का उल्लंघन होता है। इसके अलावा, इस मुद्दे से मतदाताओं का चुनावी प्रक्रिया पर विश्वास कम होता है, जिससे राजनीतिक अस्थिरता और सामाजिक अशांति बढ़ सकती है।

भारतीय चुनावी प्रक्रिया में घोस्ट वोटर्स एक गंभीर चिंता का विषय है, जो लोकतंत्र की नींव को कमजोर करता है। इस समस्या को दूर करने के लिए चुनाव आयोग, राजनीतिक दलों और नागरिकों को मिलकर काम करना होगा। चुनावी प्रक्रिया में सुधार करके और पारदर्शिता, जवाबदेही और निष्पक्षता सुनिश्चित करके, हम भारतीय लोकतंत्र को मजबूत कर सकते हैं और यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि हर वोट वैध हो और हर मतदाता का प्रतिनिधित्व हो।

ऑनलाइन गैंग
सहज शिकार हो रहे किशोर

अकुल बत्रा

ब्रिटेन में किशोर वय के लड़कों के ऑनलाइन गैंग द्वारा साझा की जा रही चरम सामग्री ने एक गंभीर खतरे की घंटी बजा दी है। नेशनल क्राइम एजेंसी (एनसीए) की चेतावनी के अनुसार, ये लड़के ऑनलाइन समूहों में शामिल हो रहे हैं, जहां वे दुखदायी और महिला विरोधी सामग्री साझा करते हैं, जो धोखाधड़ी, हिंसा और बाल यौन शोषण जैसे अपराधों को बढ़ावा देती है। यह प्रवृत्ति न केवल ब्रिटेन के लिए चिंताजनक है, बल्कि भारत जैसे देशों के लिए भी एक चुनौती है, जहां इंटरनेट और सोशल मीडिया का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। भारतीय दृष्टिकोण से इस मुद्दे का विश्लेषण करना आवश्यक है ताकि संभावित खतरों से निपटा जा सके और युवाओं को सुरक्षित रखा जा सके।

ब्रिटिश नेशन क्राइम एजेंसी के अनुसार, ऑनलाइन समुदाय साइबर हमलों, धोखाधड़ी, चरमपंथ, ब्लैकमेल, गंभीर हिंसा और बाल यौन शोषण जैसे अपराधों को बढ़ावा देते हैं।

इन ऑनलाइन समुदायों को "कॉम" नेटवर्क के रूप में जाना जाता है, और 2022 से 2024 तक ब्रिटेन में इनकी संख्या में छह गुना वृद्धि हुई है। एजेंसी के विश्लेषकों का अनुमान है कि ब्रिटेन और अन्य पश्चिमी देशों में लाखों संदेश यौन और शारीरिक शोषण से संबंधित साझा किए जाते हैं।

भारत के लिए यह चेतावनी इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यहां युवा आबादी बड़ी संख्या में इंटरनेट का उपयोग कर रही है। सस्ते डेटा और स्मार्टफोन की उपलब्धता के कारण, किशोर और युवा सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर अधिक समय बिता रहे हैं, जिससे वे इस तरह के ऑनलाइन खतरों के प्रति अधिक संवेदनशील हो गए हैं। भारत में बाल यौन शोषण और साइबर अपराध से संबंधित कानूनों और प्रवर्तन एजेंसियों की सक्रियता के बावजूद, ऑनलाइन किशोर गैंग की बढ़ती प्रवृत्ति एक गंभीर चुनौती पेश करती है।

भारत को इस खतरे का मुकाबला करने के लिए कई कदम उठाने की जरूरत है। सबसे पहले, ऑनलाइन सामग्री की निगरानी और उसे हटाने के लिए मजबूत तंत्र स्थापित करने की आवश्यकता है।

ब्रिटेन में Netflix की हिट श्रृंखला Adolescence ने "इन्सले" संस्कृति और वास्तविक दुनिया में होने वाले नुकसान के बीच संबंध को दर्शाया है, जिससे ऑनलाइन "मैनोस्फीयर" में लड़कों और युवा पुरुषों के बारे में चिंताएं बढ़ गई हैं। इसी तरह, भारत में भी ऐसे ऑनलाइन समूह और समुदाय मौजूद हैं जो युवाओं को कट्टरपंथी बनाने और उन्हें नकारात्मक विचारधाराओं से प्रभावित करने का काम कर रहे हैं।

भारत को इस खतरे से निपटने के लिए कई कदम उठाने की आवश्यकता है। सबसे पहले, ऑनलाइन सामग्री की निगरानी और उसे हटाने के लिए मजबूत तंत्र स्थापित करने की आवश्यकता है। सोशल मीडिया कंपनियों को जवाबदेह बनाने और यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि वे अपने प्लेटफॉर्म पर ऐसी सामग्री को फैलने से रोकने के लिए सक्रिय कदम उठाएं। दूसरा, युवाओं को ऑनलाइन सुरक्षा और जिम्मेदारी के बारे में शिक्षित करने के लिए जागरूकता अभियान चलाने की आवश्यकता है। स्कूलों और कॉलेजों में साइबर सुरक्षा पाठ्यक्रम शुरू किए जाने चाहिए, जो छात्रों को ऑनलाइन खतरों के बारे में जागरूक करें और उन्हें सुरक्षित रहने के तरीके सिखाएं। माता-पिता की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। उन्हें अपने बच्चों के ऑनलाइन गतिविधियों पर नजर रखनी चाहिए और उनसे खुली बातचीत करनी चाहिए ताकि वे किसी भी प्रकार की ऑनलाइन उत्पीड़न या शोषण का शिकार होने से बच सकें। माता-पिता को अपने बच्चों को ऑनलाइन समुदायों और समूहों में शामिल होने के खतरों के बारे में भी जागरूक करना चाहिए।

कानून प्रवर्तन एजेंसियों को भी इन ऑनलाइन किशोर गैंग के खिलाफ सख्त कार्रवाई करनी चाहिए।

कार्तिक का "इश्क", श्रीलीला पर डोरे! वास्तविक रोमांस या रील ड्रामा?

अपनी पॉपकॉर्न थाम लीजिए, बॉलीवुड के दीवानों! कार्तिक आर्यन, मोनोलॉग और आकर्षण के राजा, एक बार फिर चर्चा में हैं! इस बार, अपनी सह-कलाकार, प्यारी-सी श्रीलीला के साथ! उनकी केमिस्ट्री शानदार है, और कार्तिक ने इंस्टाग्राम पर एक सपनों भरी तस्वीर के साथ आग में घी डालने का काम किया! क्या वे बॉलीवुड के अगले बड़े कपल हैं? थोड़ा ठहरिए, प्रेमियों! शादी की योजना बनाने से पहले, जरा ब्रेक लगाइए! यह (जरूरी नहीं) वास्तविक जीवन का रोमांस है... अभी तक तो नहीं! कार्तिक और श्रीलीला अनुराग बसु के साथ अपनी आगामी फिल्म (दिवाली 2025 के लिए निर्धारित!) के लिए माहौल बना रहे हैं। और वो तस्वीर? फिल्म की एक झलक है। चाय बागान के बीच श्रीलीला पर कार्तिक की नजरें टिकी हुई हैं - शुद्ध रोमांस, है ना? ●

श्रुति का मौन बयान

ऑडिशन स्कैंडल ने सोशल मीडिया पर मचाया कोहराम!

ओह माय गॉड! तमिल सिनेमा की दुनिया में भूचाल आ गया है! एक 14 मिनट का वीडियो, जिसमें कथित तौर पर अभिनेत्री श्रुति नारायणन का निजी ऑडिशन दिखाया गया है - कास्टिंग काउच जैसा माहौल - एक मसालेदार मसाला डोसा की तरह इंटरनेट पर छा गया। एक्स, इंस्टा, टेलीग्राम - यह हर जगह था! प्रशंसक गुस्से से लाल हैं, इसे शोषण बता रहे हैं। लेकिन रुकिए... कुछ लोग "डीपफेक!" फुसफुसा रहे हैं। क्या यह डिजिटल धोखा हो सकता है? श्रुति की प्रतिक्रिया? पूरी तरह से चुप्पी... अभी तक! उसने इंस्टाग्राम पर एक शानदार फोटोशूट शेयर किया - भव्य सफेद और सुनहरा साड़ी! लेकिन यहाँ असली बात है: कोई कैप्शन नहीं और कमेंट्स बंद हैं! क्या वह नाटक से बच रही है या एक सूक्ष्म संदेश भेज रही है? यह मौन कार्य स्कैंडल को और भी चटपटा बना रहा है! 'सिरगाडिक्का आसई' की स्टारलेट, जिन्होंने 'सिटाडेल हनी बनी' को भी सुशोभित किया, निश्चित रूप से हमें अनुमान लगाते रहने का तरीका जानती हैं! ●

ऋतिक का बेटा, एक उभरता हुआ दिल की धड़कन! रेहान रोशन हुए 19 साल के

रुकिए, बॉलीवुड! एक नया रोशन दिलों को चुरा रहा है! हम सभी ऋतिक रोशन और सुजैन खान के बेटे रेहान पर नजर रख रहे हैं, लेकिन उनकी नवीनतम उपस्थिति ने इंटरनेट पर तहलका मचा दिया है! मां सुजैन ने अपने बेटे के 19 साल के होने पर एक दिल पिघला देने वाली बर्थडे पोस्ट शेयर की, और टिप्पणियां पूरी तरह से उनके डैशिंग लुक्स के बारे में हैं! स्टार किड्स को भूल जाइए... रेहान पहले से ही एक स्टार हैं! ऋतिक के जीन और सुजैन के ठाठ अंदाज के साथ, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि वह ध्यान आकर्षित कर रहे हैं। सुजैन के दिल को छू लेने वाले संदेश में रेहान की मजबूत आत्मा, दिल और दिमाग के बारे में बताया गया है, उन्हें अपना सबसे अच्छा दोस्त और "सच्चाई का दर्पण" बताया गया है। आउ! ●

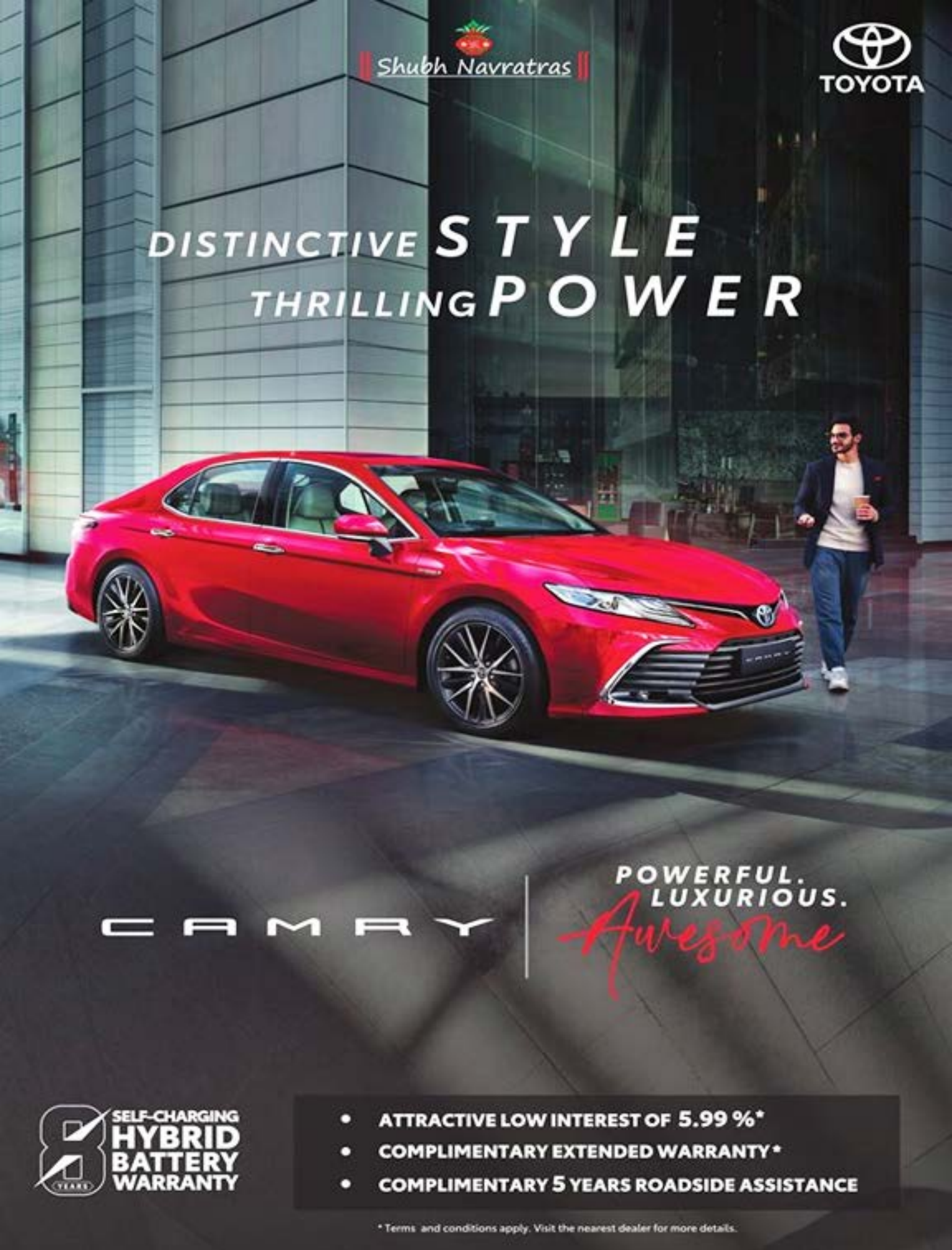

Shubh Navratras
TOYOTA
DISTINCTIVE STYLE
THRILLING POWER
CAMRY
POWERFUL.
LUXURIOUS.
Awesome
SELF-CHARGING
HYBRID
BATTERY
WARRANTY
YEARS
• ATTRACTIVE LOW INTEREST OF 5.99 %*
• COMPLIMENTARY EXTENDED WARRANTY*
• COMPLIMENTARY 5 YEARS ROADSIDE ASSISTANCE
* Terms and conditions apply. Visit the nearest dealer for more details.

RNI TITLE CODE : DELENG19447

Experience it. Look at it from all angles. Check out the contours, the craftsmanship, the perfection of form and the waterfall...

Glamour ▪ Convenience ▪ Technology

MARC®
Bathing Luxury

MARC SANITATION PVT. LTD.

A-2, S.M.A. Co-op. Industrial Estate, G.T. Kamal Road, Delhi-110 033
Ph: 27691410, Fax: 011-27691445/27692295 E-mail: info@marcindia.com Website : www.marcindia.com